मूर्त्ति-पूजा-तत्त्व-प्रकाशः

(प्रथमो मयूखः)

प्रणेताः—

सिद्धान्त-साहित्य-प्रेमी व्याख्यानँ-वाचस्पति मुनि-पुङ्गव

श्री वल्लभ विजयजी महाराज ।

सम्पादकः—

गणितागम-पारायण पण्डित

श्रीमोदनारायण मिश्रात्मज गङ्गाधर मिश्रः,

ज्यो० आ० सा० आ० दर्शन-शास्त्री ।

प्रकाशकः

स्वर्गीय सेठ फूलचन्द हजारीमलजी बीजापुरवाले

(चन्दूलाल खुशालचन्द कम्पनी)

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

सर्वाधिकार सम्पादकाधीन

विक्रम सम्वत्
२०८३

मुद्रक—
मुरली मनोहर माथुर,
मैनेजर,
श्री सुधा-कृष्ण प्रिन्टिङ्ग प्रेस,
जोधपुर

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

* आनम्र-निवेदन *

यह "मूर्त्ति-पूजा-तत्त्व-प्रकाश" नामका एक छोटा निबन्ध छपाकर प्रकाशित किया जाता है। इसमें मूर्त्ति-पूजा के विषय में यथामति संक्षिप्त रूप से वेद, शास्त्र, इतिहास, पुराण और जैनागम आदि के रुचिर-विचारों का सुचारु-रूप से चयन किया गया है, अतः मूर्त्ति-पूजा के निगूढ़-भावों के जिज्ञासुक भगवद्भक्ति-भावुक धर्म-प्रिय लघु-बुद्धि वालों के लिये यह अत्यधिक उपयोगी सिद्ध होगा और उन्हें भी परमोपयोगी सिद्ध होगा जो अपनी अल्पज्ञता से ईश्वर की रचना को ६ सेर की चना बनाते और शास्त्र-सम्मत बातों को शस्त्र से मरम्मत करते हैं।

मूर्त्ति-पूजा के सभी प्रेमियों और विरोधियों से यह मेरा विशेष अनुरोध है कि वे इस पुस्तक को आमूल चूल एकवार अवश्य पढ़ें और मध्यस्थ बुद्धि से विचार करें। इसमें लेखक की सफलता कहां तक है, विचार-शील पाठक ही कहेंगे।

मनुष्य के कृतियों में प्रमाद और भ्रम का न होना ही असंभव है, अतः जो महाशय इसके वास्तविक भूलों को मुझे सूचित करेंगे, उनका अवश्य आभारी बनूंगा और विशेष आभारी हूं—विविध-विद्या-कुमुदिनी-कुमुदनायक जैनाचार्य-वर्य श्रीमद्विजयनेमिसूरीश्वरजी के पट्टालंकार आचार्य श्री

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

विजयविज्ञानसूरीश्वरजी के शिष्य-रत्न सिद्धान्त-साहित्य-प्रेमी व्याख्यान-वाचस्पति मुनि-पुंगव श्री वल्लभविजयजी महाराज का जिनकी प्रेरणा, सहयोग और समुत्साह से यह पुस्तक लिखी गई और सदुपदेश से छपकर प्रकाशित हुई जो आज आप लोगों के कर-कमलों में सप्रेम उपहार के लिये प्रस्तुत है, इति शिवम् ।

विनीत-निवेदकः—
मङ्गाधर मिश्र, शास्त्री ।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

ॐ

" मूर्त्ति-पूजा-तत्त्व-प्रकाशः "

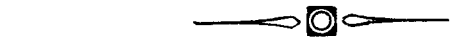

नमोऽस्त्वखिल-कल्याण-कञ्ज-कानन-भानवे ।
प्रणमत्सकलाभीष्ट-पूर्त्तये दिव्य-मूर्त्तये ॥ १ ॥

भावार्थः—सर्वमंगलरूप कमल-वन के लिये सूर्य के समान, प्रणाम करने वालों की सभी इच्छाओं के पूर्त्ति करने वाले दिव्य मूर्त्ति (भगवान्) को प्रणाम हो ॥ १ ॥

स्वाभीष्ट देव मूर्त्तीनां पूजा येन विधानतः ।
कृता प्राप्तं न किं तेन प्रत्यक्षे किं प्रमाणकम् ॥ २ ॥

भावार्थः—जिसने अपनी इष्टदेव मूर्त्तियों की विधिपूर्वक पूजा की उसने क्या नहीं प्राप्त किया अर्थात् सभी कुछ प्राप्त किया । प्रत्यक्ष में प्रमाण क्या ? ॥ २ ॥

पापं लुम्पति दुर्गतिं दलयति व्यापादयत्यापदं ।
पुण्यं संचिनुते श्रियं वितनुते पुष्णाति नीरोगताम् ॥
सौभाग्यं विदधाति पल्लवयति प्रीतिं प्रसूते यशः ।
स्वर्गं यच्छति निर्वृतिं च रचयत्यर्चा प्रभो भावतः ॥ ३ ॥

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

भावार्थः—भगवान् की (मूर्ति) पूजा भाव से पाप को काट गिराती है, दुर्गति (दरिद्रता) को नाश करती है, आपत्ति को मार भगाती है, पुण्य को इकट्ठा (संग्रह) करती है, लक्ष्मी को बढ़ाती है, नीरोगता को पुष्ट करती है, सौभाग्य को करती है, हर्ष को पल्लवित (विस्तार) करती है, यश को उत्पन्न करती है, स्वर्ग को देती है और निर्वृति (मोक्ष) की रचना करती है ॥ ३ ॥

त्रिसन्ध्यं देवार्चां विरचय चयं प्रापय यशः
श्रियः पात्रे वापं जनय नय मार्गं नय मनः ।
स्मरक्रोधाद्यारीन् दलय कलय प्राणिषु दयां,
सदुक्तं सिद्धान्तं शृणु वृणु सखे ! मुक्ति-कमलाम् ॥४॥

भावार्थः—हे मित्र, तीनों काल देवताओं की पूजा करो, कीर्त्ति को फैलाओ, श्री (लक्ष्मी-सम्पत्ति) को सुपात्रों में वपन करो अर्थात् सुपात्रों को दान दो, नीति के मार्ग पर मन को ले जाओ, काम-क्रोध आदिक शत्रुओं को नाश करो, प्राणियों पर दया करो, सच्छास्त्र एवं सज्जन पुरुषों के कहे हुये सिद्धान्त को सुनो और मुक्ति (मोक्ष-कैवल्य) रूपिणी कमला (लक्ष्मी) को वरो अर्थात् ग्रहण करो ॥ ४ ॥

हतप्रज्ञो व्यर्थं प्रलपति बहु स्वार्थनिरत,
स्तदीयार्कि हित्वाऽऽगमसुगम-मार्गंनुसर ॥
नरस्वं दौर्लभ्यं जगति बहु योनिष्वपि सखे !
ह्यतोऽस्माभिर्भाव्यं खलु मननशीलैः प्रति पलम् ॥५॥

भावार्थः—परमार्थ तत्व को नहीं जाननेवाले हतबुद्धि लोग स्वार्थान्ध होकर बहुत कुछ अन्ट सन्ट बकते हैं, अतः उनकी

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

उक्तियों को छोड़कर आगम के सुगम मार्गों को ही ग्रहण करो, क्योंकि इस संसार में अनेक (चौरासी लाख) योनियों में मनुष्य जन्म अत्यन्त दुर्लभ है, अतः हम प्रत्येक शरीर धारियों को चाहिये कि सर्वदा विचारशील होवें, क्योंकि मनुष्य वही है जो मननशील होकर सभी कार्यों को करता है ॥ ५ ॥

पुराणमित्येव न चास्ति मान्यं नवा नवीनं मतमित्यवद्यम् ।
सन्तो विविच्यान्तरद् भजन्ते मूढः परप्रत्ययनेय-बुद्धिः ॥ ६ ॥

भावार्थः—सभी पुरानी बातें सच्ची हैं यह ठीक नहीं और सभी नई बातें कच्ची (बे ठीक) हैं यह भी ठीक नहीं, वास्तविक अभिप्राय यह है कि अच्छे लोग अच्छी तरह विचार करके पुरानी या नई बातों में से किसी एक ही सच्ची बात को ग्रहण करते हैं और मूर्ख लोग विना विचारे ही दूसरों की कही हुई बात को मान लेते हैं ॥ ६ ॥

मूर्त्तिपूजा नवीनास्ति वृथा चेति वदन्ति ये ।
सदुक्तियुक्तिसंयुक्तैः प्रमाणैस्तन्निरस्यते ॥ ७ ॥

भावार्थः—'मूर्ति पूजा' नई है अर्थात् पुरानी नहीं है तथा व्यर्थ (बेकार) है इस तरह जो कोई (अविशेष दर्शी) कहते हैं, उसका खण्डन सुन्दर उक्तियों और तर्कों से युक्त प्रमाणों के द्वारा किया जाता है ॥ ७ ॥

मूर्त्ति-पूजन-तत्त्वार्थ-प्रकाशेऽस्मिन् विलोक्यताम् ।
मण्डनं मूर्ति पूजायाः खण्डनं दुर्धियां धियाम् ॥ ८ ॥

भावार्थः—इस 'मूर्त्ति-पूजा-तत्त्व-प्रकाश' नाम के निबन्ध में मूर्त्ति-पूजा के मण्डन को देखिये और दुर्बोधजनों के बुद्धि (भ्रम) के खण्डन को देखिये ॥ ८ ॥

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

दाने दुर्गतिरस्ति चाप्युपकृतौ पापं कृपायामहो,
सर्वज्ञप्रतिमार्चने च न फलं यैर्धीवरैः कल्प्यते।
आकाशे कुसुमं तथैव शशके शृङ्गं तुरंगे च यैं—
स्तत्तन्नूतनकल्पकेभ्य इह नस्तेभ्यो महद्भ्यो नमः ॥ ६ ॥

भावार्थः—दान देने में, उपकार में, दया में पाप है और सब से पूजनीय भगवान् की मूर्त्ति की पूजा में फल नहीं हैं ऐसी जो महाशय कल्पना करते हैं, तथा आकाश में फूल की और घोड़ा या शशक (खरगोस) में सींग की कल्पना करते हैं ऐसे नवीन कल्पना करने वाले उन महानुभावों को हमारा नमस्कार हो ॥ ६ ॥

"मूर्त्ति-पूजा" का सीधा सादा अर्थ है प्रतिष्ठापित देव प्रतिमाओं का सत्कार विशेष अर्थात् स्नानादिक से पवित्र होकर यथाशक्ति समयानुसार फूल, फल, धूप, दीप, जल, अक्षत आदि को लेकर देवमन्दिर में या यथा योग्य पवित्र स्थान में जाकर विनय के साथ भक्ति-पूर्वक पंचोपचार या षोड़शोपचार से या केवल भव्य भावना से उन देव मूर्त्तियों को विशेष सत्कार करने का नाम 'मूर्त्ति-पूजा' है। ऊपर दिखलाया हुआ मूर्त्तिपूजा शब्द का अर्थ यदि आपकी समझ में अच्छी तरह नहीं आया तो विशेष रूप से मूर्त्ति-पूजा शब्द का अर्थ नीचे दिया जाता है आशा है आप इसे अच्छी तरह ध्यान देकर देखेंगे, पढ़ेंगे, समझेंगे, मानेंगे और इससे आपके विशाल हृदय में पूर्ण सन्तोष होगा।

मूर्च्छा = मोह-समुच्छ्राययोः, अर्थात् मूर्छा धातु मोह और समुच्छ्राय अर्थ में है अतः मूर्त्ति शब्द की उत्पत्ति इस प्रकार

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

है—मूर्च्छति समुच्छ्रयतीति मूर्त्तिः, सम्-सुष्ठु उत्-ऊर्ध्वं श्रयः-श्रयणं-समुच्छ्रयः, समुच्छ्रय एव समुच्छ्रायः (ऐरच्-३।३।५६)। भावे घञ्। अर्थात् अच्छी तरह उच्च सुख के लिये यानी परम-शान्ति के लिये वा परमसुख के लिये या उच्चलोक के लिये जिसकी सेवा की जाय या जिसका आश्रय लिया जाय उसे मूर्ति कहते हैं—

मूर्त्ति का वाचक शब्द कितना है, उसे अमरसिंह ने लिखा है—

गात्रं वपुः संहननं शरीरं वर्ष्म विग्रहः।
कायो देह क्लीव पुंसोः स्त्रियां मूर्त्तिस्तनुस्तनूः॥

(अमर कोष)

अर्थात्—गात्र, वपुस्, संहनन, शरीर, वर्ष्म, विग्रह, काय, देह, मूर्त्ति, तनु और तनू ये ११ शब्द मूर्त्ति के पर्य्यायवाची हैं।

श्रीयुत् हेमचन्द्राचार्य ने भी लिखा है कि—

"मूर्त्तिः पुनः प्रतिमायां कायकाठिन्ययोरपि"

(अभिधान चिन्तामणि)

अर्थात्—मूर्त्ति शब्द प्रतिमा वाचक है, शरीरवाचक है और कठिनता (कड़ापन) वाचक है।

पूज=पूजायाम्, अर्थात् पूज धातु पूजन अर्थ में है, अतः-पूज्यते-मनसा वाचा फूल-फल-धूप-दीप-जल-गन्धाक्षतादिना सत्कारविशेषो विधीयतेऽनेनेति पूजनम्, पूजनमेव पूजा। अर्थात् मन से वाणी से और सामयिक फूल-फल-धूप-दीप-गन्ध जल-अक्षत-नैवेद्य आदि उपकरणों (सामग्री) के द्वारा इष्टदेव

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

मूर्त्ति का जो विशेष सत्कार किया जाता है उसीका नाम पूजन है या उसीको पूजा कहते हैं।

पूजा शब्द के पर्य्याय अमरसिंह ने लिखा है—

"पूजा नमस्याऽपचितिः सपर्याऽर्चार्हणाः समाः" ॥

(अमरकोष)

अर्थात्—पूजा, नमस्या, अपचिति, सपर्य्या, अर्चा और अर्हणा ये छः नाम पूजा के हैं।

अब मूर्त्ति और पूजा इन दोनों पदों को इकट्ठा करने से 'मूर्त्ति-पूजा' यह एक संयुक्त पद हुआ इसे समासान्त पद कहते हैं। यहां षष्ठी तत्पुरुष समास है जैसे-मूर्त्ति की पूजा या मूर्त्तियों की पूजा = मूर्त्ति-पूजा। सारांश यह निकला कि उच्चसुख के लिये यानी परम शान्ति के लिये अथवा परमसुख के लिये या उच्चलोक के लिये जिसकी सेवा की जाय या जिसका आश्रय लिया जाय उसे विश्ववन्द्य वीतराग ईश्वर की मूर्त्ति कहते हैं, उसी मूर्त्ति को श्रद्धा सहित पवित्र मन वाणी के द्वारा फूल-फल धूप-दीप-जल-अक्षत-नैवेद्य आदि से विशेष सत्कार करने का नाम ही 'मूर्त्ति-पूजा" है।

अब श्रद्धालु मूर्त्ति-पूजक बुद्धिमान् मूर्त्तिपूजा शब्द को किन अर्थों में मानते हैं, वे सब के सब ऊपर बतलाये हुये मूर्त्ति-पूजा शब्द के अर्थों से साफ साफ प्रकट हैं। हां, यह एक दूसरी बात है कि कोई विपरीत विचार वाले मूर्त्ति-पूजा विद्वेषी महाशय स्वमत सिद्ध करने के लिये बलात्कार खैंचातानी करके मूर्त्ति-पूजा शब्द के सुप्रसिद्ध लक्ष्यार्थ को अनर्थ कर डालें, ऐसे व्यक्तियों के लिये यह कहावत अत्यन्त प्रसिद्ध है कि—

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

"खुशी मियां मिट्ठू की
अपनी दाढ़ी रक्खे या मुंडाले"

इसलिये जिन भाइयों के शून्य हृदयागार में अपनी कुटिल-कराल-कृष्ण-पक्ष की बलात्कार स्थापना करने का जिद्द है, उनके लिये तो यह मूर्त्ति-पूजा का सप्रमाण सोपपत्तिक तर्कयुक्त सरस सविस्तर भी लेख कौड़ी काम का नहीं होगा, मगर हां, जो सत्य और असत्य के निर्णायक हैं, श्रद्धालु हैं, विचारवान् हैं और मननशील होकर भले बुरे का विचार करते हैं उनको तो दिव्य दृष्टि के जैसा काम देगा, अर्थात् मनुष्य जनोपयोगी बहुत सामग्री इसमें विचार-चक्षु के द्वारा दीख पड़ेगा। साथ ही निर्विवेकियों के लिये तो पहले भी कुछ कहा जा चुका है और फिर भी कहना पड़ता है कि—अच्छी अच्छी युक्तियों से भरपूर लोकशास्त्र संमत सर्वोपयोगी कल्याणकारक उपदेश भी उन्हें सुनाया जाय या पढ़ने के लिये दिया जाय तो वह 'अरण्य रोदन' या 'जल-ताड़न' के जैसा होता है, इसीलिये महात्मा तुलसीदास ने अपनी रामायण (रामचरित मानस) में इनको किस तरह वर्णन किया है, ध्यान देकर देखिये पढ़िये सुनिये और मनन कीजिये—

"फूलै फलै न बेत, यदपि सुधा वर्षहि जलद।
मूढ़ हृदय नहि चेत, जो गुरु मिलय विरंचि सम॥"

बस, अब आपको मूर्ख के लक्षणों को जानने के लिये यह ऊपर का सोरठा ही काफी है। मगर मूर्ख भी दो तरह के होते हैं—एक साधारण मूर्ख और दूसरा विशेष मूर्ख। इनमें साधारण मूर्ख तो किसी प्रतिभाशाली सर्वोपकारी विद्वान् महात्मा के

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

उपदेशों को मान लेते हैं और तदनुसार आचरण भी करते हैं, किन्तु जो मामूली कुछ लिख पढ़कर स्वार्थान्धता में डूबा हुआ अपने ही को पण्डित मानता है और दूसरे के सत्य उत्तमोत्तम युक्तियुक्त बातों को नहीं मानता वह पहले दर्जे बढ़ा हुआ विशेष मूर्ख या महामूर्ख है। इसी बात का महात्मा योगीन्द्र महाराज भर्तृहरि ने अपना 'नीतिशतक' के आरम्भ में ही लिखा है कि—

"अज्ञः सुखमाराध्यः सुखतरमाराध्यते विशेषज्ञः।
ज्ञान-लव दुर्विदग्धं ब्रह्मापि नरं न रञ्जयति॥"

अर्थात् साधारण दर्जे का मूर्ख सुख से समझाया जा सकता है, और जो गुण ग्राही हैं, विचार वाले हैं उनको समझाने में कुछ भी कठिनाई नहीं अर्थात् ऐसे लोग थोड़ा कहने पर भी बहुत समझते हैं, मगर जो ज्ञान-लव से दुर्विदग्ध हैं अर्थात् इधर उधर किञ्चिन्मात्र जानकर अपने को ही पण्डित मानने वाला है उसको ब्रह्मा (महा ज्ञानी या सर्वज्ञ) भी समझा नहीं सकते या खुश नहीं कर सकते तो फिर साधारण पण्डितों की बात ही क्या?

मगर प्रत्येक समझदार व्यक्ति का यह परम कर्त्तव्य और अधिकार है कि—शास्त्र-संमत लोकोपकारी अपने विचारों को जन-समूह (समाज) में प्रकट करे, जिस से विद्यारूपी प्रकाश की वृद्धि हो और अविद्यारूपी अन्धकार का संहार हो, इसीलिये अब आगे मूर्त्तिपूजा के विषय में सविस्तर-प्रमाण तर्क दृष्टान्त और युक्तियों के द्वारा बहुत कुछ दिखलाया जा रहा है,

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

क्योंकि बहुत ऐसे भी बन्धुगण हैं, जिन्हें मूर्त्ति-पूजा-निन्दकों की विभ्रम वाणी को सुनकर मूर्त्ति-पूजा की ओर प्रवृत्ति नहीं होती, नतीजा यह निकलता कि ऐसे भोले भाई अपने सुगम कल्याण-पथ से गिर जाते है। मैं यह नहीं कहता कि आप सहसा मेरी बातको मानलें कि मूर्त्ति-पूजा अवश्य करो, किन्तु यह भी कहने से चुप नहीं रहा जाता कि इस में जो कुछ लिखा जा रहा है वह प्रायः सप्रमाण सोपपत्तिक और सयुक्तिक है, इसलिये आप यदि निष्पक्ष भाव से प्रेम-पूर्वक इसको पढ़ेंगे और मनन करेंगे तो आपके हृदय में इस से अवश्य पूर्ण-सन्तोष होगा, एवम् मूर्त्ति-पूजा में प्रीति और भक्ति होगी, तथा आप स्वयं दूसरों को कहेंगे कि भाइयों! 'मूर्त्ति-पूजा' अवश्य करनी चाहिये। अथवा संक्षेप में यों कह सकते हैं कि वैदिक धर्मावलम्बी, बौद्ध, जैन, सिक्ख, ईसाई और मुसलमान आदि सब के सब किसी न किसी रूप में मूर्त्ति-पूजा को अवश्य मानते हैं। हां, यह दूसरी बात है कि कोई तो खुल्लम खुल्ला मानता है और कोई किसी स्वार्थान्ध के भ्रमपूर्ण बहकाव में आकर विवेक हीन होने से 'मूर्त्ति-पूजा' को नहीं मानने का दावा करता है, मगर ऐसे व्यक्ति और उनके उपदेशक सुधारक भी किसी न किसी तरह मूर्त्ति-पूजा को अवश्य ही स्वीकार करते हैं। हम अब इन बातों को किस्सा, कहानी, इतिहास, युक्ति, तर्क और प्रमाणों के द्वारा आप को बतलाते हैं, आशा है आप पूर्ण-ध्यान देकर इसे सुनेंगे-विचारेंगे और स्वीकार करेंगे

कमनीय कल्पनापुर के पास सुधारकपुर नाम का एक गांव था। वहां नये सुधारकों के जैसे मतों के मानने वाले

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

काका कालूराम नाम के एक व्यक्ति रहते थे। इनके पूर्व वंशज तो आस्तिक थे, देव-मूर्त्ति-पूजक थे, वेदादि सत्य शास्त्र को मानने वाले थे, ईश्वर पर विश्वास रखते थे सदाचारी थे और थे कुलीन। मगर जब काका कालूराम इस दीवानी दुनियां में दीखने और दीखाने लायक हुये तो इन्होंने वेद-शास्त्रों, प्राचीन कल्याण कारक धर्मवृत्त पर कुल्हाड़ी फेरना शुरु कर दिया, क्योंकि कालूराम को आरम्भ मे धार्मिक शिक्षा नहीं देकर इंगलिश फर्स्ट बुक (अंगरेजी की प्रथम पुस्तक) ही पढने के लिए दी गई थी। कुछ दिन के बाद नई दुनियां की नई हवा जब कालूराम को लगी तब वे अंगरेजी को भी अधूरा ही छोड़ कर इधर उधर भटकने लगे और नये आर्यसमाजियों की तरह " पल्लवग्राहि पाण्डित्यं " के अनुसार थोड़ा थोड़ा हर एक मज्झब को दिल और आंख को अलग अलग करके देखा, फिर क्या कहना है इनके आचरण और मान्यता के विषय में, अर्थात् यूरोपीय अनार्य सभ्यता इनके दिल में घुस गई और ये लोकोपकारी सत्य सनातन सुख प्रद प्रत्येक आर्य्य-धर्म-कर्म को अपने दिल से उड़ा दिये, इनको ईश्वर और धर्म केवल ढौंग ही दीखने लगे, यानी नये आर्यसमाजियों से भी ऊंचे दर्जे में इनका नाम दाखिल हो गया। चूंकि नये सुधारक आर्य समाजियों की प्रारम्भिक शिक्षा प्रायः किसी वैदिक मन्त्र से ही दी जाती है जिस में खास कर ईश्वर या धर्म का वर्णन रहता है, इसलिये ऐसे आर्यसमाजी वेदादि सच्छास्त्र और ईश्वर आदि सर्व मान्य वस्तुओं को अवश्य मानते हैं। मगर कालूराम की आरंभिक शिक्षा इंगलिश शिक्षा थी, इसलिये वे नये आर्य समाजी से भी ऊंचे दर्ज में

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

हुये, क्योंकि आरम्भिक इङ्गलिश शिक्षा वाले प्रायः वेदादि सत्य शास्त्र और ईश्वर को भी हृदय से नहीं मानते इसके दर्जनों प्रमाण मिलते हैं, यही बात कालूराम को भी सवा सोलह आना लागू हुई, ऐसे प्रसंगों पर महात्मा तुलसीदास का एक दोहा कितना उपयुक्त है सुनिये—

" ग्रह-गृहीत पुनि बात-वश तापर बिच्छू-मार ।
ताहि पिलावे वारुणी, कहो कौन उपचार ॥ "

फिर क्या था, कालूराम ने समय पाकर धर्म-मार्ग को शीघ्र ही तिलाञ्जलि देदी। चूँकि, यह एक साधारण प्रसिद्ध व्यक्ति थे, धनी थे, इसलिये इनके अनुयायी भी शीघ्र ही अधिक संख्या में हो गये। प्रायः अधर्म करते आदमी को तत्काल में कष्ट नहीं होता और धर्म करने में तो बड़े बड़े शूर-वीरों को भी खट्टी डकारें आनी लगती हैं, शास्त्र भी कहता है कि " धर्मस्य गहना गतिः " अर्थात् धर्म की गति बहुत कठिन है, बात सवा सोलह आना सच्ची है, क्योंकि धर्म-पालन करने में भगवान रामचन्द्र, बुद्ध, महावीर, युधिष्ठिर और नल आदि को कितना कष्ट उठाना पड़ा था, इतिहास साक्षी है। मगर कष्ट सहकर भी अपने धर्मों को पूरी तरह पालन करने के कारण ही इन लोगों का नाम स्वर्णाक्षर से अङ्कित अजर अमर हो गया। इसके विपरीत असत्य भाषण चोरी जारी आदि पाप कर्म सुगमता से हो जाते हैं, किन्तु दोनों के बीच बहुत कुछ अन्तर हैं, जैसे—धर्म कार्य तो आरम्भ में विष के समान मालुम होता है और परिणाम में अमृत के जैसा होता है लेकिन पाप कर्म के आरम्भ में सुगमता और लाभ भी मालुम होता है किन्तु परिणाम विषमय होता

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

है। बस, यही बात काका कालूराम और उनके अनुयायियों को भी हुई, मगर दुनियाँ इस बात को मानती है कि—

"जमाना रंग बदलता है"

अर्थात् समय परिवर्तनशील है, इस संसार में सब ही को कभी सुख और कभी दुःख अवश्य भोगना पड़ता है, यानी दुनियाँ में एक भी ऐसा आदमी नहीं जिसका जीवन केवल सुखमय या केवल दुखमय हुआ हो। काका कालूराम का समय ने भी पलटा खाया और दुखों के सघन अन्धकार उन्हें दीखने लगे जब कालूराम को अधिक दुःख होने लगा तब वे अपने किये हुए दुष्कर्मों को कभी कभी मन में लाकर बहुत अफसोस करते थे और भगवान् के नाम, पूजन आदि में उनकी रुचि ऊपर से कुछ कुछ होने लगी। मगर अन्तस्तल मे तो पाखण्डियों के पाखण्डपने का ही भूत सवार था। वास्तव में यह एक प्रसिद्ध बात है कि कोई जब पाप कर्म को करता है तब उससे पहले उसकी अन्तरात्मा में ऐसा एक बार अवश्य होता है कि यह दुष्कर्म करना अच्छा नहीं, इसे नहीं करना चाहिये। जब बुद्धि उस समय सत्वगुण युक्त निर्मल होती है तब फिर वह आदमी उस अकर्म को नहीं करता, यदि बुद्धि उससे विपरीत तमोगुणवाली होती है तो दुष्कर्म से छुटकारा नहीं होता। कालूराम की बुद्धि बहुत दिनों से तमोगुण से युक्त थी, मलिन थी, इसलिए अच्छे विचारों को आने पर भी वे उसे अपना अमल में लाने से मजबूर थे। चूँकि यह भी एक प्रसिद्ध बात है कि हमेशा जिस वस्तु का ध्यान करें, स्मरण करें और मन में लावें वही वस्तु उस व्यक्ति को प्रिय मालूम होती है। मगर यहाँ मामला

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

कुछ और होगया। कालूराम जब हर तरह से अधिक दुःखी हुये तब पाखण्डपनों के सहारे अपनी बीमारी का पूरा इलाज किया, जब उससे भी इनकी दुःखरूपी दाल नहीं गली, तब ईश्वर भक्ति, नामकीर्त्तन, पूजन आदि की तरफ भी कुछ नजर को दौड़ाये। दुःखी आदमी भी अपने दुःखों को दूर करने के लिये ईश्वर की सेवा-भक्ति करते हैं, ऐसी भगद्गीता की गर्जना है—

चतुर्विधा भजन्ते मां जनाः सुकृतिनोऽर्जुन ! ।
आर्त्तो जिज्ञासुरर्थार्थी ज्ञानी च भरतर्षभ ! ॥

श्रीकृष्ण अर्जुन से कहते हैं कि—हे भरतवंश श्रेष्ठ अर्जुन चार प्रकार के लोग मुझ (ईश्वर) को भजते हैं, एक आर्त्त (दुखी), दूसरा जिज्ञासु (जानने की इच्छावाला) तीसरा अर्थार्थी (धन पुत्रादि के इच्छुक) और चौथे ज्ञानी (आत्म-ज्ञानी) ये सबके सब मुझे भजते हैं, इसलिये वे सब पुण्यात्मा हैं मगर सबसे अच्छा ज्ञानी ही है यह मेरा सिद्धान्त है।

मगर कालूराम की अन्तरात्मा में पाखण्डपने के विचारों का ही प्रबल प्रसार था। ऊपर बगुला भगत के जैसे कभी कुछ लोगों को दिखाने के लिये कर लेते थे या जब दुःखों का दौड़ा काबू में नहीं रहता था तब बगुला भगत बन जाते थे मगर इससे कुछ भी होने जाने वाला नहीं था। भगवद्भक्ति में तो पूरी सचाई चाहिये, सचाई की कसौटी पर सवा सोलह आना उतरनेवाली ही भक्ति वास्तव में भक्ति है। हमेशा सत्य की विजय और झूठ की हार होती है। यदि कोई कपटी ऊपर से आडम्बर करके बगुला भगत बन जाय तो उसका निस्तार नहीं होता। यानी अन्त में वह पाखण्डपन

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

खुल ही जाता और कोई सच्चरित्र सन्त महात्मा ऊपर से भले ही कुवेष किये हों मगर अन्दर से उनकी भावना अच्छी हैं, वे सदाचारी हैं, सत्यभाषी हैं, परोपकारी हैं, तत्वज्ञ हैं तो वे दुनियाँ से अवश्य पूजे जाते हैं, इसीलिये महात्मा तुलसीदासजी ने लिखा है कि—

उघरहि अन्त न होइ निबाहू। कालनेमि जिमि रावण राहू॥
किये कुवेष साधु सन्मानू। जिमि जग जामवन्त हनुमानू॥

धर्म-विरोधी जन पूर्व-पुण्य के प्रभाव से जब तक धन दौलत, मित्र, पुत्र, शरीर आदि सुख से मुक्त रहते हैं तब तक धर्म मार्ग की एक भी बात उन्हें अच्छी नहीं लगती। यहाँ तक कि ईश्वर का भजन, पूजन और परोपकार आदि से भी कोसों दूर रहते हैं, मगर जब पाप-कर्म सिर पर सवार होकर उन्हें खूब सताता है, तब बगुला भगत बनकर ईश्वर भजन आदि धर्म कार्य को ऊपर से मानते हैं, किन्तु सत्य-भाषी, धर्म-प्रेमी, परोपकारी सज्जनगण तो सुख में वा दुःख में प्रत्येक अवस्था में ईश्वर को अनन्यभक्ति से भजते हैं और लोक सम्मत शास्त्रीय धर्म-कार्य को करते हैं। ऊपर की बात काल्पनिक भक्ति और वास्तविक भक्ति का एक अच्छा दृष्टान्त है और महात्मा कबीरदासजी ने अपनी एक साखी में इसी बात को लिखा है कि—

दुख में सुमिरन सब करे, सुख में करे न कोय।
जो सुख में सुमिरन करे, दुख काहे को होय॥

काका कालूराम कई दिनों तक और भी पाखण्डपने को अपनाते हुए बगुला भगत ही बने रहे। फिर जब कुछ और समय बीता तो कालूराम के पूर्व पुण्यों की छाया उनके

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

मलिन हृदय पट पर पड़ने के लिए प्रस्थान की। क्योंकि व्यक्ति मात्र के सुख दुःख में यथा समय हेर फेर अवश्य होता है इस बात को कवि-कुल-किरीट कालीदासने खूब अच्छी तरह लिखा है —

"कस्यात्यन्तं सुखमुपगतं दुःखमेकान्ततो वा
नीचैर्गच्छत्युपरि च दशा चक्रनेमिक्रमेण"

अर्थात् लगातार सुख या दुःख किसी को नहीं होता, किन्तु जैसे गाड़ी के चलने केसमय में गाड़ी का चक्र (पहिया, चक्का) और नेमि (आरा) ऊपर और नीचा होता रहता है, उसीतरह प्रत्येक जीवों का जीवन सुख और दुःख से भरा हुआ है। कभी सुख तो कभी दुःख ऐसा कोई भी व्यक्ति नहीं जिसको सदा केवल दुःख ही मिला हो या सुख ही मिला हो।

प्रकृति देवी की लीला तो विचित्र है ही, समय को पाकर उस सुधारक पुर गांव के पास एक सच्चात्यागी सर्व शास्त्रज्ञ महोपदेशक दादा दीनबन्धु नाम के योगीराज आये। सच्चा धर्म कर्म का उपदेश करना और लोगों के उचित प्रश्नों का समुचित उत्तर देना योगीराज का खास काम था। स्वभाव में बड़े ही सौम्य थे, वाणी मीठी थी और थी प्रभाव वाली। आचार सदाचार था कोई कुछ पूछता तो हंसते हंसते उसका उत्तर दे देते थे विपक्षियों के मन में भी उनके उपदेशों का मान था। क्यों न मान हो, क्योंकि सच्चे दिल से जो धर्म के पुजारी हैं उनके चरणों में आज भी दुनियाँ नतमस्तक होती है। अस्तु एक दिन अवसर पाकर काका कालूराम भी योगीराज के भाषण को सुनने के लिये गये। पहले तो इन्हों ने अपने मन में ऐसा इरादा करके चला

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

कि किसी तरह अपने प्रश्नों के बदौलत योगीराज को चुप अवश्य करना चाहिये साथ में इनके अनुयायी भी अनेक थे। पण्डाल की रचना अच्छी तरह हुई थी, हजारों की संख्या में अनेक तरह के विचार वाले लोग वहां इकट्ठे हुये थे। व्याख्यान की जगह अनेक उपकरणों से शोभित थी। निर्दिष्ट समयानुसार योगीराज वहां पहुंच गये। पहुंच ते ही उनके सबही ने समुचित स्वागत करके निजी सत्कार बतलाया योगीराज ने भी सब को जय जगदीश कहकर अपने आसन पर बैठ गये और बैठते ही ॐ शब्द की हर्ष-प्रद ध्वनि की। उसके अनन्तर बड़े प्रेम से माङ्गलिक श्लोकों को आरम्भ में बोले, जिससे श्रोतागण के मन एकाग्रचित्त से उनके भाषण को सुनने के लिये हर्ष से प्रफुल्लित होकर मंत्र-मुग्ध से होगये।

अनन्तर योगीराज ने अपने भाषणों में दान, शील, तप, भावना, विनय, चारित्र्य, देव-गुरु-भक्ति और ईश्वर पूजन आदि को खूब विस्तार-पूर्वक सुन्दर भावों में अनेक दृष्टान्त और आगम आदि के प्रमाणों से लोगों को समझाया। मानवता की अच्छी तरह व्याख्या की। धर्म की रक्षा को करने के लिये लोगों को खूब उत्साह बढ़ाया और सब में सफल हुए। भाषण ऐसा मधुर मनोहर और रुचिकर था कि साधारण व्यक्ति भी कान लगाकर सुनते थे। कठिन से कठिन विषयों को ऐसे सीधा सादा करके समझाते थे कि दुर्बोध बालक भी उस बात को सहज में समझ लेता था। इस तरह उस दिन का भाषण समाप्त हुआ और सबके सब वास्तविक धर्मोपदेश से उत्पन्न परम श्रवणानन्द को अपनी

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

इच्छा के अनुसार प्राप्त किया। किन्तु इतना होने पर भी काका कालूराम के मन में पूरी शान्ति नहीं हुई, उनके हृदय में बहुत दिनों की आशङ्कायें भरी पड़ी थीं, इसलिये अपना अच्छा अवसर जानकर योगीराज से कुछ पूछने के लिये उत्सुक हुए। योगीराज का भाषण समाप्त हो चुका था, इसलिये लोगों के धार्मिक प्रश्नों के समुचित उत्तर देने में समय अनुकूल था। फिर क्या था, समय पाकर काकाजी की तरफ से जन्म भर की जकड़ी हुई, कुटिल प्रश्नों की झड़ियां लगने लगीं—नीचे गौर करके देखियेः—

काकाजी—योगीराज के सामने हाथ जोड़ कर महाराज, मुझे आप से कुछ प्रश्न पूछना है, आज्ञा हो तो पूछूं।

दादाजी—हर्ष के साथ, आप की जितनी इच्छा हो प्रश्न कर सकते हैं।

काकाजी—महाराज, मूर्त्ति तो जड़ हैं, फिर उस जड़ प्रतिमा की पूजा करने से चैतन ईश्वर का ज्ञान कैसे हो सकता ?

दादाजी—सुनोजी, हम आप जो अक्षर लिखते हैं, वे जड़ ही हैं, और अक्षरों के समुदाय वेद शास्त्र आदि पुस्तकें भी जड़ ही हैं, किन्तु उन जड़ पुस्तकों को अच्छी तरह पढने और मनन करने से चेतन रूप ईश्वर का या व्यक्ति विशेष का ज्ञान हो जाता है, इसलिये जड़ मूर्त्ति में भक्ति-भाव से ईश्वर की पूजा करने से चैतन्य ईश्वर का ज्ञान होता है इस मे कुछ भी सन्देह नहीं।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

काकाजी—महाराज, महाकाश-स्वरूप ईश्वर को छोटी जड़-मूर्त्ति में मान कर पूजा करने से उस विशाल स्वरूप ईश्वर का ज्ञान कैसा ?

दादाजी—सुनोजी, पृथिवी लाखों कोस तक लम्बी चौड़ी है, मगर भूलोग पढ़ने वाले २-३ फूट के कागज पर ही उसका ज्ञान कर लेते हैं। इसी तरह आप 'ॐ' शब्द को ईश्वर का बोधक मानते हैं, इसलिये जैसे अत्यन्त लघु रूप 'ॐ' शब्द से ईश्वर का बोध आपको होता है, वैसे ही मूर्त्ति-पूजकों को भी आपके 'ॐ' शब्द से भी बड़ी आकारवाली मूर्त्ति से ईश्वर का ज्ञान होता है, इसमें आश्चर्य क्या ?

काकाजी—महाराज, मूर्त्ति जड़ है, इसलिये वह तो अपनी देह की भी रक्षा नहीं कर सकती, तो फिर हम लोगों की क्या रक्षा कर सकती है ?

दादाजी—महाशय, आपकी वेदादि पुस्तकें भी तो जड़ हैं, वे अपनी रक्षा स्वयँ नहीं कर सकतीं, मगर उन पुस्तकों के द्वारा हम लोगों को कितने ज्ञानों का लाभ होता है आप को मालुम होगा, इसलिये जड़-मूर्त्ति तो स्वयं अपनी रक्षा नहीं कर सकती, मगर उसका पूजा करने वालों को उसके द्वारा बहुत रक्षा होती है और उसकी अपनी भी रक्षा होती है।

काकाजी—महाराज, जड़-मूर्त्ति को प्रति दिन भक्ति भाव से पूजा करने से मूर्त्ति-पूजकों के मन में जड़ता का

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

संस्कार जम जायगा, नतीजा यह होगा कि वे मरने के बाद पत्थर हो जायेंगे, इसलिये मूर्त्ति-पूजा से लाभ की जगह हानि ही दीखती है।

दादाजी—कुछेक मुसकिरा कर अहह! आपका यह बे नजीर अक्ल और दूरदर्शी दृष्टि कैसी? जरा दिल में गौर करके सोचें और समझें कि—पैसा, दो पैसा, आना, दो आना, रुपया, नोट और टीकट आदि सब ही चीजें जड़ हैं, और राजा से रंक तक सभी प्रति दिन इसका व्यवहार करता है और यह बात तब से चली आ रही है जब से दुनियादारी है, अब आपके कथनानुसार—" जड़ की सेवा करने से मरने के बाद चेतन भी जड़ हो जाता है " तो आज आप लोग सब के सब लोहा, पीतल, चान्दी, सोना या कागज के रूप में, जड़ रूप ही होजाते मगर ऐसा दीखने में नहीं आता, बल्कि प्रत्येक बारह वर्ष के बाद मर्दन सुमारी में लाखों तक हिन्दुस्तानी जन संख्या बढ़ती है, इसलिये मूर्त्ति पूजा से कोई भी जड़ नहीं होता अपितु उत्तम गति होती है।

काकाजी—कुछ तेज होकर, महाराज, उस जड़-मूर्त्ति में चैतन्य ईश्वर की कल्पना बेकार है, अच्छी कल्पना तो यह कि उस सर्व व्यापक ईश्वर के निराकार स्वरूप की ही पूजा की जाय।

दादाजी—वाहरे काबिल, भला बताओ तो सही कि निराकार को तुम अपना ध्यान में कैसे ला सकते और जब

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

ईश्वर सर्व व्यापक है तब जड़मूर्त्ति में ईश्वर की पूजा सिद्ध ही हो चुकी।

काकाजी—जरा भौंह लटका कर, महाराज, आप तो कहते हैं कि मूर्ति-पूजा अच्छी है, मगर जब मूर्त्ति को कोई चोर चुरा कर ले जाता या कोई दुष्ट उसे तोड़ फाड़ डालता तब मूर्त्ति उस चुराने वालों को या तोड़ने फोड़ने वालों को कुछ नहीं कहती, अतः जो अपनी भी रक्षा नहीं कर सकती वह दूसरे की रक्षा क्या कर सकती ?

दादाजी—खूब जोर से, वाहरे अकल मन्दों के सिरताज, बलिहारी है ऐसी बुद्धि के बलिहार पर। आपको यह नहीं मालुम कि आपकी धार्मिक वैज्ञानिक वेदादि पुस्तकें बड़े काम की चीज हैं यदि उन्हें कोई चोर चुरा कर ले भागे या फाड़ डाले तो वे स्वयं अपनी रक्षा कर सकती हैं ? या उसकी रक्षा करना आपका काम है। इसलिये आप जब मूर्त्ति की रक्षा करेंगे और उसकी सेवा-पूजा करेंगे तब वह आपकी रक्षा अपने सेवा-जनित पुण्य-फलों से अवश्य करेगी। और आपकी जो यह महाभ्रान्ति है कि-मूर्त्ति में स्थित देव न अपनी रक्षा करते और न चुराने वालों को सजा देते, यह भी व्यर्थ की शंका है, क्योंकि बहुतेरे ऐसे आदमी हैं जो ईश्वर को कभी कभी अवाच्य शब्द भी कहते हैं, खरी खोटी सुनाते हैं, एवं कितने तो ईश्वर को मानते तक भी नहीं हैं, तो क्या ईश्वर स्वयं

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

आकर उसको दण्ड देता है या पहले ईश्वर को यह बात मालुम नहीं थी कि यह मुझे दुर्वाक्य कहेगा, इसलिये इसको पैदा करना अच्छा नहीं ?

नहीं ! नहींजी !! कभी नहीं ! बिलकुल नहीं !! हरगिज नहीं !!! ईश्वर उस दुर्वाक्य कहने वालों को स्वयं आकर कुछ नहीं कहता, मगर उसका परिणाम उस दुष्ट व्यक्ति पर भयानक रूप से पड़ता है क्योंकि वह तमोगुणयुक्त अज्ञान के वश में होकर वैसा कहता है जिसका फल उसको बहुत बुरा होता है। बस अब आप अपने उपर्युक्त प्रश्नों के उत्तर में भी इसी बात को ध्यान में लावें कि मूर्त्ति तो अपने आप उन चुराने वालों को कुछ नहीं कह सकती मगर उन चोरों को इसका दुष्परिणाम अवश्य भोगना पड़ता है और मूर्त्ति की सेवा, रक्षा आदि करने से सेवक की रक्षा भी मूर्त्ति के द्वारा होती है।

काकाजी—महाराज, चैतन्य आत्मा को जड़ मूर्त्ति से क्या लाभ ? क्योंकि जड़ चीजें न अपना ही कोई उपकार कर सकतीं और न चेतन को ही कर सकती हैं, इसलिये मूर्त्ति-पूजा नहीं करनी चाहिये।

दादाजी—वाहजी वाह सावस, क्या जड़ चैतन्य को कुछ भी लाभ नहीं पहुँचाता ? अच्छा सुनो-मानलो कि एक आदमी अच्छा हट्ठा-कट्ठा शरीर में सुडौल है मगर उसे आखें नहीं है तो क्या वह कुछ देख सकता है ? उत्तर में कहना पड़ेगा कि नहीं। अब यहां देखना चाहिये कि चैतन्य रूप आत्मा तो उसमें विद्यमान है मगर जड़ आंखों के न होने से उस चेतन आत्मा

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

को भी नहीं दीखती, क्योंकि देखने की शक्ति तो आंख में ही है, जो कि जड़ है, इसलिये चेतन आत्मा को जड़ मूर्त्ति को अपनाने से बहुत लाभ होता है। और भी सुनो कि-आखें स्वयं अपने को नहीं देखतीं मगर कोई, उत्तम शीशा (दर्पण) को देखे तो उसमें उसकी आखें, मुह, नाक, कान, आदि साफ साफ दिखलाई देगी, अब समझो कि चेतन आत्मा और जड़ आखें इन दोनों को एक तीसरी जड़ वस्तु से कितना लाभ होता है। इसी तरह और भी समझो कि—तुम में देखने की शक्ति १-से-दो मील तक की है, अब यदि तुम्हारे आंख में दूरवीक्षण यन्त्र लगा दिया जाय तब तुम पहले की अपेक्षा दश गुना बीस गुना या पचाश गुना भी दूर तक देख सकोगे, अब शोचो और समझो कि तुम्हारी चेतन आत्मा तुम में विद्यमान है और उसकी सहायता करने वाली जड़ आंखें भी तुम्हारे पास हैं मगर एक तीसरी जड़ वस्तु की सहायता तुम्हें दी गई तब तुम्हारे दीखने की शक्ति कितनी बढ़ गई, इसलिये मूर्त्ति-पूजा करने से चेतन आत्मा को बड़ी शान्ति का लाभ होता है।

काकाजी—कुछ वेग में आकर, महाराज, स्वामी दयानन्द सरस्वती आदिक महर्षि ने मूर्त्ति-पूजा को नहीं माना इसलिये हम भी नहीं मानते हैं।

दादाजी—यह आपका कहना कि-स्वामी दयानन्द सरस्वतीजी मूर्त्ति-पूजा को नहीं मानते थे, सरासर झूठ है,

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

अर्थात् स्वामीजी विद्वान थे, वे मूर्त्ति-पूजा को मानते थे।

काकाजी—आश्चर्य के साथ, महाराज, आप यह क्या कह रहे हैं? भला ऐसा कभी हो सकता है, यदि ऐसी बात है तो कहां जरा दिखलावें।

दादाजी—सुनोजी साहब, दिखलाता हूँ कि—सत्यार्थ प्रकाश पुस्तक के ३७ वें पृष्ठ में स्वामीजी ने लिखा है कि—हवन करने के लिये इतनी लम्बी चौड़ी और ऐसी चतुष्कोण वेदी होनी चाहिये, ऐसा *स्रुक्* पात्र और ऐसा *प्रणिता* पात्र होने चाहिये। अब जरा अकल से काम लो कि यदि स्वामीजी मूर्ति को नहीं मानते तो अपना खास ग्रन्थ में इसे क्यों लिखते? अथवा शिर्फ कह कर ही समझा देते फिर चित्र (आकार) देकर व्याख्या करने की क्या आवश्यकता थी? इसलिये स्वामीजी भी मूर्त्ति को मानते थे।

काकाजी—महाराज, हम उन चित्रों को ठीक वेदी तो नहीं मानते किन्तु असली वेदी आदि के ज्ञान में निमित्त मानते हैं।

दादाजी—विहंस कर, वाहजी वाह—आप जैसे उन चित्रों को असली वेदी के ज्ञान में निमित्त मानते हैं, उसी तरह मूर्त्ति-पूजक भी वास्तविक ईश्वर के ज्ञान में उस पत्थर की मूर्त्ति को हेतु मानते हैं।

काकाजी—वेदी आदि वस्तु साकार होने से बन सकती है, मगर ईश्वर तो निराकार है, केवल ज्ञान गम्य और

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

हृदय में चिन्तनीय हैं तो ईश्वर का आकार कैसे हो सकता है ?

दादाजी—जब आप का ईश्वर निराकार है और हृदय मात्र चिन्तनीय है तब उस ईश्वर के साथ ॐ पद का सम्बन्ध नहीं रहेगा, क्योंकि ॐ पद रूपी है, इसलिये ॐ पद के ध्यान उच्चारण आदि से आप को कुछ भी लाभ नहीं होगा।

काकाजी—ना ! जी महाराज, जब हम ॐ पदका ध्यान करते हैं तब हमारा ध्यान ॐ पद के साथ नहीं रहता, प्रत्युत उस समय ॐ पद के वाच्य ईश्वर में रहता है।

दादाजी—जब आपका ध्यान उस ईश्वर के 'वाचक' ॐ पद को छोड़ कर 'वाच्य' ईश्वर में रहता है तब आपको ईश्वर के 'वाचक' ॐ पद की क्या आवश्यकता है ?

काकाजी—कुछ कटकटा कर, महाराज—यहाँ ॐ पद की आवश्यकता इसलिये होती है कि—ॐ पद के बिना ईश्वर का ज्ञान हो ही नहीं सकता।

दादाजी—कुछ मुसकुराते हुये—हां, अब ठीक रास्ते पर आ गये, अच्छा सुनो और ध्यान देकर खूब सुनो और समझो भी कि—जैसे, ॐ पद की स्थापना के बिना ईश्वर का ध्यान नहीं हो सकता, वैसे ही मूर्त्ति के बिना साधारण मनुष्यों को ईश्वर का ज्ञान ध्यान भी नहीं हो सकता, क्योंकि जब तक मनुष्य को केवल ज्ञान नहीं होता, तब तक मूर्त्ति के बिना ईश्वर के स्वरूप का बोध होना कठिन ही नहीं बल्कि

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

असंभव है, अतः ईश्वर बोध रूप कार्य में कारणभूत मूर्त्ति-पूजा को अवश्य करनी चाहिये।

काकाजी—महाराज, ईश्वर तो निराकार है, फिर उसकी मूर्त्ति किसने देखी ? यदि नहीं देखी तो बिना देखे उसका बनाना आकाश कुसुम की तरह असंभव है।

दादाजी—ईश्वर निराकार है और साकार भी हैं, उस साकार ईश्वर की मूर्त्ति प्राचीन मुनि महर्षियों ने देखी, तब से परम्परा लोगों को मूर्त्ति का बोध होता आ रहा है, इसलिये उस मूर्त्ति के निर्माण में असंभवता कैसी ?

काकाजी—महाराज, ईश्वर साकार है, इसमें प्रमाण क्या ?

दादाजी—शास्त्र प्रमाण है, सुनो—

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत ।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम् ॥
परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम् ।
धर्मसंस्थापनार्थाय संभवामि युगे युगे ॥

[गीता. अध्या० ४ श्लो० ७, ८]

श्रीकृष्ण कहते हैं कि—हे अर्जुन, इस पृथ्वी पर जब जब धर्म की हानि और अधर्म की वृद्धि होती है, तब तब मैं अपनी योगमाया के द्वारा अपनी आत्मा को प्रगट करता हूं, अर्थात् ईश्वर के विशेष अंशों को लेकर अवतार लेता हूँ। वह मेरा अवतार सज्जन पुरुषों की रक्षा के लिये होता है, आततई (दुष्टों) के विनाश के लिये होता है और धर्म की स्थापना के लिये होता है, इस तरह मैं युग युग में प्रगट होता हूं।

काकाजी—महाराज, आपके कहे हुये इन गीता के श्लोकों में जिसको संशय हो या जिसको श्रद्धा नहीं हो तो

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

उसके लिये साकार ईश्वर नहीं है।

दादाजी—निराकार के जैसा साकार ईश्वर भी सभी के लिये है, मगर जो नहीं मानता वह उसकी मूर्खता है और उपर्युक्त श्लोक जैसे मान्य वाक्यों में भी जिसको श्रद्धा नहीं होती और संशय होता है, उसको क्या होता है सुनोः—

अज्ञश्चाश्रद्दधानश्च संशयात्मा विनश्यति ।
नायं लोकोऽस्ति न परो न सुखं संशयात्मनः ॥

[गीता अ० ४ श्लोक ४०]

अर्थात् जो आत्म-ज्ञान से रहित है, जिसको श्रद्धा नहीं है और जो संशयात्मा है यानी अच्छी बुरी प्रत्येक बातों में जिसको सन्देह बना रहता है वह नाश होजाता है, क्योंकि संशयात्मा को तो न यही लोक है न दूसरा लोक है और न सुख ही है। इसी तरह एक भावुक हृदय का भक्ति-भावित सरस उद्‌गार और सुनो—

जिन खोजा तिन पाइयाँ, गहरे पानी पैठ।
मैं बौरी खोजन चली, रही किनारे बैठ॥

काकाजी—कुछ मन मुटाव होकर, महाराज—आज अब शाम होगई, आज्ञा हो तो फिर कल अपने पाँचों मित्रों को लेकर आऊँ, अभी घर को जाता हूँ।

दादाजी—बहुत अच्छा, जाइये, अब मुझे भी सन्ध्या, पूजा, पाठ, आदि करना है और कल आपकी तबियत में जचे तो ५ के अलावा दर्जनों अपने मित्रों को लावेंगे और अवश्य आवेंगे।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

काकाजी घर को गये इनके साथ गाँव के और भी कितने प्रमुख व्यक्ति थे। गाँव में जाते ही लोगों ने इन सबों से पूछा कि—कहिये क्या हुआ ?। काकाजी और दादीजी में तो आज खूब प्रश्नोत्तर हुआ होगा। सब ने उत्तर में कहा कि महात्मा दादाजी बड़े ही प्रभाविक विद्वान मालूम होते हैं, उन्होंने बड़ी बड़ी युक्तियों से काकाजी के मत को खण्डन कर दिया और वेद शास्त्र के प्राचीन मतों की स्थापना करदी, यहां तक कि मूर्त्ति-पूजा को भी उन्होंने बड़ी योग्यता से सप्रमाण तर्कों के द्वारा सिद्ध कर दिया है। साम हो गया था इसलिये काकाजी ने योगीराजसे यह कहकर घर आया कि-कल मैं अपने पांचों मित्रों के साथ आपसे इन प्रश्नों के विषय में बातचीत करने के लिये हाजिर होऊँगा। देखो, अब कल्ह क्या होता है ?

उधर काकाजी को सारी रात नींद नहीं आई, क्योंकि जन्म भर से एक विकट पाखण्डपने को अपनाये हुये थे, वह अब दूर होना चाहता था। प्रभात होते ही काकाजी ने अपने उन पांचों (आर्य, मुसलमान, इसाई, सिक्ख और जैन) मित्रों से जाकर मिला और अपनी सारी राम कहानी कह सुनादी। मित्रोंने इन्हें खूब आश्वासन दिया और कहा कि-इसमें घबराने की कोई बात नहीं, हम लोग आज आपके साथ जरूर चलेंगे और जैसे बनेगा वैसे उन योगीराज दादाजी को खूब शास्त्रार्थ करके अवश्य हरायेंगे और हम लोग अपनी नई मानी हुई बात को ठीक ठीक सिद्ध करेंगे।

समय को आते—जाते देर नहीं होती। काकाजी को दादाजी के पास जाने का समय हो गया। काकाजी सभी

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

मित्रों के साथ प्रस्थान करने को तैयार हुये, साथ ही आज और भी गांव के लोगों की भीड़ भेड़ों की तरह बढ़ उठी। सब के सब चल दिये और थोड़े ही समय में वहां पहुँच गये जहां महान् विद्वान् सर्व शास्त्रपरिज्ञाता योगीराज दादा दीनबन्धुजी थे। सबने दादाजी को सप्रेम प्रणाम किया और दादाजी ने भी सभी को उचित सत्कार के साथ बैठने को कहा:—

कुछ समय के बाद दादाजी ने काका कालूराम से पूछा कि—कहोजी काकाजी आज आपके वे मित्र भी आगये। कालूराम ने क्रमशः अपने मित्रों का परिचय इस तरह कराया—

पहले आर्य छज्जूरामजी शास्त्री की तरफ देखकर महाराज, आप आर्य समाज के प्रेसीडेन्ट है और प्रकाण्ड-पण्डित हैं, आपकी दलीलें मशहूर है और आपका शुभ नाम श्रीमान् छज्जूरामजी शास्त्री है। आप एक प्रसिद्ध आर्य समाजी हैं और स्वामी दयानन्द सरस्वतीजी के बातों में आपको पूर्ण श्रद्धा है, एवं आप में सत्यार्थ प्रकाश की सभी बातें कूट कूट कर भरी हैं।

फिर मुसलमान मित्र की तरफ देखकर—आपका नाम मौलाना अब्दुल हुसेन है। आपने कुरान शरीफ में अच्छी तालिम हासिल किया है और आप अपने मज्झब के एक पक्के फकीर हैं।

फिर इसाई मित्र की तरफ इशारा करके—महाराज आप का नाम हजरत मूसा मसीह है। आपको बाइबिल का अच्छा ज्ञान है। आप एक मशहूर पादरी हैं और आपको बाहरी ज्ञान भी काफी है।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

इसके बाद सिक्ख मित्र की तरफ नजर करके—महाराज आपका शुभ नाम सरदार सेरसिंह है। आप गुरु नानक साहिब के और गुरु गोविन्दसिंह के परम भक्त हैं। आपको गुरुओं की वाणी में अतिशय श्रद्धा और प्रेम है। आप गुरु नानक रचित ग्रन्थों के अलावा और भी अच्छे अच्छे किताबों के तालिम पाये हैं।

फिर तेरह पन्थी जैन ज्ञानचन्द्रजी की तरफ इशारा करके महाराज आपका शुभ नाम ज्ञानचन्द लूकण है। आप तेरह पन्थियों में प्रधान साधु श्री भिक्खु स्वामी और जीतमलजी महाराज के सिद्धान्तों को अच्छी तरह जानते हैं। आप पक्के तेरह पन्थी श्रावक हैं। इस तरह काकाजी ने अपने उन पांचों मित्रों से दादाजी का परिचित कराया। बाद में 'मूर्ति पूजा' विषय को लेकर वाद विवाद प्रश्नोत्तर का श्रीगणेश हुआ।

दादाजी—पहले छज्जूरामजी शास्त्री आर्य समाजी की तरफ नजर करके—क्यों, छज्जूरामजी, आप मूर्ति-पूजा' को तो मानते हैं ?

आर्य छज्जूजी—नहीं, महाराज हम मूर्ति-पूजा को नहीं मानते, क्योंकि मूर्ति जड़ है. अतः जड़ की पूजा से कुछ भी लाभ नहीं।

दादाजी—महाशय, यह केवल कहने की बात है कि—हम मूर्ति पूजा को नहीं मानते, मगर पक्षपात को छोड़कर सच्चे दिल से विचार करें तो यही कहना पड़ेगा कि इस दुनिया में ऐसा एक भी मज्झब नहीं जो मूर्ति-पूजा से अलग हो। आप लोग भी मूर्ति-पूजा को मानते हैं। मूर्ति-पूजा जड़-पूजा नहीं है।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

आर्य छज्जूरामजी--नहीं महाराज, हम स्वामी दयानन्द सरस्वती के अनुयायी होकर मूर्त्ति-पूजा को कभी मान सकते हैं, कभी नहीं, बिलकुल नहीं।

दादाजी--महाशय, यदि आप ज्ञानानन्द सरस्वती के बातों को ध्यान देकर विचार करें तो आपको कहना पड़ेगा कि मूर्ति-पूजा जड़-पूजा में शामिल नहीं है, बल्कि वह चेतन की पूजा कही जा सकती।

आर्य--महाराज, यदि ऐसी बात है तो आप कोई दृष्टान्त देकर अच्छी तरह बतलावें।

दादाजी--अच्छी बात है आप ध्यान देकर सुनिये--कि यदि आप दयानन्द सरस्वतीजी जैसे संन्यासी विद्वान् जो थकान में हों, उनकी सेवा करें तो क्या आपको उस सेवा का फल मिलेगा?।

आर्य--क्यों नहीं मिलेगा? अवश्य मिलेगा।

दादाजी--शाबश, यह सेवा जिसको आपने किया है, जड़ शरीर की ही सेवा किया है, तो फिर आप इसका फल क्योंकर मानते हैं?

आर्य--नहीं, महाराज, विद्वान् का शरीर जड़ नहीं है, उसमें तो जीवात्मा वर्त्तमान है।

दादाजी--ठीक है, आप शरीर में जीवात्मा के होने से चेतन की सेवा को मानते हैं और दुनियां भी मानती है, मगर दर असल में सेवा तो जड़ शरीर की ही होती है। क्योंकि जीवात्मा तो निराकार है फिर उसकी

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

सेवा कैसी ? और यदि किसी विद्वान् के शरीर में जीवात्मा को रहने से उसकी सेवा करनी आप की राय में ठीक है तो विश्व व्यापक ईश्वर की पत्थर आदि की मूर्तियों में भी विद्यमान रहने के कारण मूर्त्ति-पूजा ईश्वर-पूजा ही सिद्ध होती है, इसलिये उस विद्वान के जड़ शरीर की सेवा की अपेक्षा से ईश्वर की प्रतिमा की सेवा अनन्तगुण अधिक फल देने वाली सिद्ध होती है।

आर्य—महाराज, मूर्त्ति जड़ है और वह तो निर्माण कर्त्ताओं के हाथों का कौशल है। कोई भी मूर्त्ति हम को अच्छा या बुरा कुछ भी उपदेश नहीं देती, किन्तु विद्वान् साधु सन्तों से तो हमें प्रत्यक्ष सुन्दर धार्मिक उपदेश मिलता है। फिर आप विद्वान् के शरीर से जड़ मूर्त्ति की महत्ता का विशेष वर्णन क्यों करते हैं।

दादाजी—महाशय, यदि आपको कोई अच्छे उपदेशक मिल जाय और वे सार्वजनिक हित उपदेश भी आपको दें, मगर आप उसे कुछ भी अपने ध्यान में नहीं लावें तो फिर उन अच्छे उपदेशों से क्या ? शास्त्र कहता है कि—

" मन एव मनुष्याणां कारणं बन्ध-मोक्षयोः "

अर्थात् संसार में बन्धन और मुक्ति (छुटकारा) का कारण मन ही है। इसलिये जैसे आपने अच्छे उपदेशकों से सुन्दर उपदेश सुने मगर सुन कर उसे छोड़ दिया, यानी अपना अन्तस्तल से उसको नहीं अपनाया, मनन नहीं किया

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

तो आपके लिये वे अच्छे उपदेश भी निरर्थक हुये और यदि सावधान होकर सुना और तदनुसार आचरण भी किया तो अमृत के जैसा वह उपदेश सिद्ध होता है। इसी तरह जो कोई श्रद्धा और प्रेम से मूर्त्ति की पूजा करता है और कहता है कि हे सच्चिदानन्द घन! हे परमात्मन्! हे वीतराग देव! हे परब्रह्म! हे भगवन! आप हमको इस सुदुस्तर संसार सागर से पार कराओ, आप मेरी सारी विषय-वासना को दूर कराओ और जिस से हमारा परम कल्याण हो ऐसी सुबुद्धि को दो, इत्यादि जो भक्ति-भावना के द्वारा प्रभु के पास विनीत होकर पूजा करता है, उसे निर्मल बुद्धि होती है, चित्त शान्त होता है और अनुदिन विशेष सुख का लाभ होता है। मगर जो कोई केवल यह कह कर कि—चलो, हटो यह पत्थर की मूर्त्ति तो है, इस से क्या लाभ? फिर ऐसे पुरुषों को मूर्ति कुछ भी लाभ दायक नहीं।

आर्य—महाराज, ईश्वर तो निराकार है, फिर मूर्त्ति में ईश्वर को मानने से ईश्वर भी साकार हो जायेंगे अर्थात् जड़ हो जायेंगे। अतः ईश्वर की सेवा में मूर्त्ति कोई कारण नहीं है।

दादाजी—भाई, ईश्वर निराकार हैं और साकार भी हैं। और मूर्त्ति में ईश्वर की सत्ता को मानने से ईश्वर में जड़ता दोष नहीं होता, जैसे आकाश सभी जगह व्यापक रूप से—घट में, पट में, मठ में और देह में व्याप्त है, मगर वे घट पटादि चीजें आकाश कभी नहीं होती और न आकाश ही घट पट के रूप में हो जाता है। चूंकि निराकार ईश्वर का बोध केवल

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

ज्ञानी को ही होता है और साकार का बोध साधारण जन को भी हो सकता है, इसलिये उस निराकार ही परमात्मा की सेवा पूजा मूर्त्ति के बिना साधारण जीवात्मा से कभी नहीं हो सकती, अतः परमात्मा की सेवा में मूर्त्ति कारण है।

आर्य—भला, आप क्या कह रहे हैं,—परमात्मा की सेवा में जड़ मूर्ति को कारण मानने की क्या जरूरत है? क्या केवल वेद के मंत्रों के द्वारा ही परमात्मा की पूजा-प्रशंसा नहीं हो सकती?

दादाजी—क्यों जी, आपके वेदों की ऋचायें क्या चैतन्य हैं? वे भी तो जड़-अक्षरों के ही समूह हैं, इस तरह आपके कथनानुसार भी तो ईश्वर-पूजा का कारण जड़ (मूर्ति) ही सिद्ध हुआ।

आर्य—महाराज, हम उन जड़ अक्षरों के द्वारा परमात्मा के गुणों को जपते हैं अर्थात् परमेश्वर को भजते हैं।

दादाजी—हां, जैसे आपने जड़-अक्षरों से ईश्वर की स्तुति, या संस्मरण किंवा जाप किया, उसी तरह मूर्ति-पूजक भी मूर्ति के द्वारा ईश्वर का ही जाप, या स्मरण किंवा स्तुति को करते हैं। दर असल में बात दोनों की एक ही है मगर समझ में हेर-फेर है।

आर्य—अच्छा, यह ठीक है कि वेद-जड़ है, मगर हम उससे प्रशंसा तो परमात्मा की ही करते हैं।

दादाजी—अब देखो, क्यों जी, मूर्ति-पूजक मूर्ति में किस की पूजा करते हैं? वे भी तो सच्चिदानन्द परमेश्वर को

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

ही पूजते हैं, फिर बात तो यों की यों रही और वास्तव में विचार करें तो आर्यसमाजी लोग भी मूर्ति-पूजा को मानते हैं।

आर्य—महाराज, आप यह क्या कह रहे हैं कि—आर्य समाजी लोग भी मूर्ति-पूजा को मानते हैं। क्या यह कभी हो सकता है?

दादाजी—जी हाँ, आर्य समाज भी मूर्ति-पूजा को मानती है क्योंकि जब आर्यसमाज धर्म के सूत्रधार स्वामी दयानन्द सरस्वती ने ही मूर्ति-पूजा मानी है तो उनके अनुयायियों का कहना क्या?

आर्य—अरर्र! आप तो बड़ी गजब की बातें कह रहे हैं, भला, स्वप्नावस्था में भी कभी कोई इस बात को मान सकता है कि स्वामी दयानन्द सरस्वती 'मूर्ति-पूजा' को मानते थे।

दादाजी—जी हाँ, थोड़ा भी पढ़ा लिखा विचार वाला व्यक्ति स्वामीजी के मूलग्रन्थ को ही देखकर बिना हिच-किचाहट के साथ यह कह सकता है कि स्वामीजी 'मूर्ति-पूजा' को मानते थे और इस बात को हम आपको जागृतावस्था में ही समझाते हैं खूब ध्यान देकर सुनिये।

आर्य—अच्छा, सुनाइये।

दादाजी—सुनोजी, आप लोग वेदी को रचकर घृत आदि उत्तम पदार्थ से अग्नि में हवन करते हैं। सो क्या अग्नि पूजा, या जड़-पूजा वा मूर्ति-पूजा नहीं है?

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

अथवा यों कहो कि--अग्नि में ईश्वर की स्थापना को मान कर पूजते हैं।

आर्य—जी ना, हम स्थापना नहीं मानते, किन्तु यह मानते हैं कि—हवन करने से वायु शुद्ध होती है और वह हवनकी धूआं दूर तक पहुँच कर दूषित जल वायु को पवित्र करती है जिससे रोगों के कीटाणु न होते और लोगों का स्वास्थ वृद्धि रूप महा कल्याण होता है।

दादाजी—महाशय, यदि हवन से वायु को ही शुद्ध करना है तो वेदी आदि बनाने की क्या जरूरत ? शिर्फ चूल्हे में ही घी आदि को डाल देने से वायु के संयोग से अपने आप सुगन्धि चारों ओर फैल जायगी। यदि थोड़ी देर के लिये वेदी पर हवन करना स्वीकार कर लिया जाय तो हवन करने के समय में वेद के मन्त्रों को पढ़ने की क्या जरूरत ? अतः सिद्ध हो गया कि जैसे मूर्त्ति-पूजा काल में मूर्त्ति-पूजक लोग ईश्वर की प्रशंसा में श्लोक स्तुति आदि को पढ़ते हैं, वैसे ही आप लोग भी ईश्वर की प्रशंसा में वेद-मन्त्रों को पढ़ते हैं और अग्नि-पूजा को करते हैं।

आर्य—महाराज, स्वामी दयानन्द सरस्वती ने अपने ग्रन्थों में मूर्त्ति-पूजा को खण्डन ही किया है और आप कहते हैं कि-स्वामीजी मूर्त्ति-पूजा को मानते थे।

दादाजी—क्यों, ऊपर जो हवन की बातें कहीं हैं, उसको स्वामीजी नहीं मानते थे ? कहना पड़ेगा कि स्वामीजी हवन के पक्के पुजारी थे। इस पर भी यदि दिल में पूरी तसल्ली न हुई तो कुछ और सुनिये और खूब

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

ध्यान देकर सुनिये—स्वामीजी ने 'सत्यार्थ-प्रकाश' में लिखा है कि मन को स्थिर करने के लिये अपनी पीठ की हड्डी में ध्यान लगाना चाहिये। यह बात 'सत्यार्थप्रकाश' के सातमां समुल्लास में "शौच सन्तोषतपः स्वाध्यायेश्वर०।" इस योग दर्शनसूत्र की व्याख्या में लिखी है और वहां उपर्युक्त सूत्र के विशेष व्याख्यान में लिखा है कि "जब मनुष्य उपासना करना चाहे तब एकान्त देश में आसन लगा कर बैठे और प्राणायाम की रीति से बाहरी इन्द्रियों को रोक कर मन को नाभिदेश में रोके वा हृदय, कण्ठ, नेत्र, शिखा अथवा पीठ के मध्य हाड (हड्डी) में मनको स्थिर करे"। अब यहां शोचने और समझने की बात है कि स्वामीजी की हड्डी-पूजा से तो भगवान् की 'मूर्त्ति-पूजा' कहीं अच्छी है, क्योंकि पीठ की हड्डी में ध्यान करने से जो लाभ होगा उससे हजारों गुण अधिक लाभ परमात्मा की मूर्त्ति में ध्यान को लगाने से होगा, बस, इससे यह सिद्ध हुआ कि मूर्त्ति-पूजासे कोई भी व्यक्ति अछूता नहीं है और प्रत्येक आर्य का यह परम आवश्यक कर्त्तव्य है कि वे प्रतिदिन भव्य-भाव-भक्ति से अपना इष्टदेव की मूर्त्ति की पूजा करें।

आर्य—कुछ विनीत होकर, महाराज, निराकार चेतन ईश्वर का बोध साकार जड़ (मूर्त्ति) से कैसे हो सकता?

दादाजी—सुनियेजी, आप इस बात को तो अच्छी तरह जानते हैं कि जब लड़के स्कूल में पढ़ने के लिये जाते हैं तब

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

उन्हें रेखागणित की पुस्तकें भी पढ़नी पड़ती है, जिनमें रेखा और बिन्दु आदि की परिभाषा निराकार सी प्रतीत होती है। मगर बहुतेरे लड़के रेखागणित में प्रवीण होकर भूगोल, खगोल, भगोल आदि की चमत्कारिक गूढ़ कठिन बातें प्रत्यक्ष कर लेते हैं। इसी तरह यथाकथित पूजा-ध्यान आदि के द्वारा साकार मूर्त्ति से निराकार ईश्वर का बोध होता है।

आर्य—महात्मन्, रेखा और बिन्दु की बात अच्छी तरह समझ में नहीं आई. अतः कृपया फिर इसको विस्तार-पूर्वक समझावें।

दादाजी—अच्छी बात, सुनिये—मानलीजिये कि किसी लड़के ने अपने माष्टर से रेखागणित के पाठ के समय में पहले यही प्रश्न पूछा कि माष्टर साहिब, रेखा किसे कहते हैं? माष्टर ने उत्तर में कहा—जिस में लम्बाई हो और मोटाई नहीं हो उसे 'रेखा' कहते हैं। इस उत्तर को सुन कर लड़का अपने मन में शोचने लगा भला माष्टर साहब क्या कह रहे हैं, क्या ऐसी भी कोई चीज हो सकती है जिस में लम्बाई हो पर मोटाई नहीं? ऐसा कभी नहीं हो सकता, मालुम होता है कि माष्टर साहब हम को कुछ कह कर प्रतार (बहला) रहे हैं, लड़का होसियार था, उसके हृदय में यह बात नहीं बैठी उसने फिर माष्टर से पूछाः—माष्टर साहब, आपने जो उतर में कहा है वह ठीक नहीं जचता, क्योंकि ऐसी तो कोई चीज ही नजर में नहीं आती—जिस में लम्बाई हो किन्तु

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

मोटाई नहीं हो, तब रेखा कैसे बन सकती ?

मास्टर साहब ने उत्तर दिया कि—प्यारे, अनेक बिन्दुओं के संयोग से रेखा बनती है।

लड़का ने फिर पूछा-मास्टर साहब, "बिन्दु" किसे कहते है

मास्टर ने उत्तर में कहा—जिसका स्थान नियत हो, परिमाण (माप, तौल) न हो और विभाग न हो उसे 'बिन्दु' कहते हैं।

लड़का बिन्दु की परिभाषा को सुन कर अपने मन में विचार करने लगा कि—अरर्र, गजब है, कहो ऐसा कौन पदार्थ है, जिसका स्थान तो निश्चित है मगर परिमाण और विभाग नहीं है, इसलिये 'बिन्दु' की परिभाषा ही गलत है। मैं ठीक कहता हूँ कि मास्टर साहब मुझे कुछ कह कर ठग रहे हैं, क्योंकि, पहले जब मैंने रेखा की परिभाषा पूछी, तब उसका असंभाव्य ही उत्तर दिये और इस पर भी तुर्रा यह कि रेखा के स्वरूप को व्यक्त करने के लिये बिन्दु के संयोग को ग्रहण करते हैं। अब जब कि बिन्दु की ही सिद्धि असम्भव है तब उस बिन्दु के द्वारा जिसको सिद्ध करना है वह तो सुतरां असम्भव है। इस तरह अपना मन में तर्क वितर्क से सिद्ध कर लिया कि जब रेखा और बिन्दु, दोनों की परिभाषा ही गलत है, तब उस रेखा गणित के गलत होने में सन्देह कैसा ?

लड़के के दिलमें रेखाकी परिभाषापर जब पूरी तसल्ली नहीं हुई, तब उसने फिर मास्टर से पूछा कि—मास्टर साहब, रेखा की परिभाषा ही गलत है। क्योंकि बिन्दुओं के संयोग से रेखा का स्वरूप बनता है, मगर बिन्दु का स्वरूप भी तो ठीक ठीक नहीं बन सकता, इसलिये रेखागणित भी ठीक नहीं।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

माष्टर साहब शिक्षा देने में प्रथम श्रेणी के विद्वान् थे, लड़के के मन में श्रद्धा को देखकर उन्हें अधिक सन्तोष हुआ और हंसते हुये माष्टर साहब ने लड़के से कहा—प्यारे, भोले भावुक, कितनी भूल खा रहे हो, तुम अभी अपने दिल की शंका को छोड़ दो और मैं जो कुछ कहता हूँ उसे सावधान होकर सुनो, फिर मनन करो तो ये तुम्हारी शंकायें थोड़े ही दिनों में दूर हो जायगीं, जब कुछ आगे पढोगे। लड़का सुशील, श्रद्धालु और होनहार था। लड़का ने माष्टर की बातें मानली और विनीत होकर कहा कि—अच्छी बात, अब आप रेखा को अच्छी तरह समझाने की कृपा करें। माष्टर ने तुरत ही कागज पर पेन्सिल लेकर एक सीधी लकीर अ——उ——ई ऐसी खींच दी और लड़के से कहा—देखो, यह 'अ उ ई' रेखा है। अ और ई ये दो चिन्ह रेखा का प्रान्त (छोर या आखरी जगह) है जहां बिन्दु होती है और उ रेखा का मध्यस्थान (बीच की जगह) है। इन बातों को मेरे कथनानुसार तुम पहले मानलो और आगे पाठ को लेते जाओ तो शीघ्र ही तुम्हें रेखा का ज्ञान हो जायगा। लड़के ने वैसा ही किया जैसा माष्टर ने कहा, अनन्तर थोड़े ही दिनों में वह लड़का रेखा गणित में प्रवीण हो गया और उसकी सारी शंकायें जाती रहीं। फिर दादाजी ने छज्जूराम आर्य से कहा कि सुनिये छजूरामजी, जैसे उस लड़के को पहले गुरु की बात माननी पड़ी और पीछे शीघ्र ही रेखा का ज्ञान और रेखागणित का ज्ञान हुआ, उसी तरह आगम शास्त्र और सज्जन पुरुषों से कही हुई मूर्त्ति-पूजा को जो कोई श्रद्धा से मानता है तो थोड़े ही दिनों में उसका सात्विक स्वभाव बढ़ने लगता और कल्याणमय ज्ञान का उदय होने लगता जिससे

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

निराकार ईश्वर का बोध हो जाता है और अन्त में परम शान्ति मिलती है।

और भी सुनिये और अपने मन में गुनिये कि—आपके कथनानुसार ईश्वर निराकार है, मगर साकार ॐ पद में ईश्वर का समावेश हो जाता है, इसलिये निराकार साकार हो सकता है और साकार से निराकार का बोध हो सकता है। एवं आप ईश्वर को सर्व व्यापक मानते हैं और मानते हैं कि परिछिन्न प्रतिमा में उसका समावेश नहीं हो सकता, मगर आपको शोचना चाहिये कि जब सर्व व्यापक ईश्वर एक छोटा-सा ॐ पद में आ सकता है, तब वह मूर्त्ति में नहीं आ सकता क्या ?

इसी तरह जब एक छोटासा ॐ शब्द सर्व व्यापक विभु का बोध करा सकता तब फिर मूर्त्ति क्योंकर नहीं करा सकती ? जैसे निराकार ईश्वर को ॐ के रूप में लिखा या माना जाता है उसी तरह पत्थर या धातु की प्रतिमा में यदि ईश्वर की स्थापना मान ली जाय तो आपत्ति क्या ?

आप मानते हैं कि ईश्वर-ज्ञान निराकार है, मगर साकार जड़ वेदादि पुस्तकों में भी तो ईश्वर का ज्ञान मानते हैं, आप अब पक्षपात को छोड़कर मध्यस्थ बुद्धि से विचार करके आप ही कहिये कि यह स्थापना नहीं तो और क्या है ? इसलिये आपको अवश्य मानना पड़ेगा। निराकार ईश्वर के ज्ञान की स्थापना साकार वेदों में हुई हैं और निःसंदेह ईश्वर का ज्ञान अनन्त है, मगर प्रमाण वाले शास्त्रों में तो इसकी स्थापना अवश्य करनी पड़ती है, अथवा यों कहना पड़ता है कि वेदों में ईश्वर का ज्ञान है। इस तरह यदि निराकार ईश्वर की मूर्त्ति बनाली जाय तो क्या दोष है ?

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

और भी सुनिये कि—"आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब" के बनाये हुये स्वामी दयानन्दजी के "जीवन-चरित्र" के पृष्ठ ३५६ में लिखा है कि—"ईश्वर का कोई स्वरूप नहीं है, परन्तु जो कुछ इस संसार में दृष्टि गोचर हो रहा है वह सब ईश्वर का ही स्वरूप है इससे साफ मालूम होता है कि प्रतिमा भी ईश्वर का ही स्वरूप है क्योंकि जब संसार की सभी वस्तु परमात्मा का रूप है तब परमात्मा के रूप से प्रतिमा अलग रह गई क्या ?

आर्य—महाराज, जड़ (प्रतिमा) की पूजा करने से चेतन का ज्ञान कभी नहीं हो सकता, अतः प्रतिमा पूजा निरर्थक है।

दादाजी—वाहजी, आपका जब ऐसा ही ख्याल है तब जड़ वेदों से ईश्वर का ज्ञान नहीं होना चाहिये, मगर आपका दृढ़ विश्वास है कि वेदों से ईश्वर का ज्ञान होता है हम पूछते हैं कि वेद अपने आप ज्ञान कराने में समर्थ है ? या आदमी अपनी बुद्धि से ज्ञान प्राप्त करता है ?

यदि आप कहें कि वेद ज्ञान देने में स्वयं समर्थ है तो ऐसा कथन कभी सत्य नहीं, क्योंकि जब ऐसा ही हो तो कितने मूर्ख बुकसेलरों को ईश्वर का ज्ञान हो जाना चाहिये, मगर ऐसा दीखने में एक भी नहीं आता अर्थात् वेद जैसे पुस्तकों को अपने पास रखने वाले, अनेक हैं मगर वेद सम्बन्धी ज्ञान तो विरला ही किसी पण्डित प्रकाण्ड को होता है। यदि कहें कि अपनी बुद्धि से ज्ञान-प्राप्त होता है तो उस तरह प्रतिमा से भी ज्ञान प्राप्त हो सकता है, इसलिये जड़ वेदादि पुस्तकों की तरह मूर्ति

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

की भक्ति से बहुत कुछ लाभ हो सकता है अतएव प्रतिमा पूजा सार्थक है।

आर्य—महाराज, जड़ पत्थर की मूर्ति को देखने से, पूजा करने से निरन्तर ध्यान करने से मूर्ति पूजकों में जड़ता आ जो सकती है, अन्त में परिणाम यह होगा कि मूर्ति-पूजक भी जड़ हो जायेंगे।

दादाजी—वाहजी वाह, आपके तर्क और बुद्धि की बलिहारी है, जरा शोचो तो सही—एक मूर्ख भी समझ सकता है कि स्त्री की मूर्ति को देखकर काम तो अवश्य उत्पन्न होता है मगर वह देखने वाला पुरुष स्त्री नहीं बन जाता। इसी प्रकार भगवान् की शान्त दान्त मूर्ति को देखकर मूर्ति-पूजक का हृदय शान्त दान्त हो जाता है और ईश्वर के पवित्र गुण कर्म स्वभाव जैसे उसका भी गुण कर्म स्वभाव पवित्र हो जाता है और यदि आपका वैसा ही विश्वास है तो आप जड़ ॐ पद को अनेक बार जप, ध्यान किये होंगे फिर भी जड़ नहीं बने।

आर्य—विनीत होकर—महात्मन्, मूर्ति तो जड़ है फिर उस जड़ से चेतन ईश्वर का ज्ञान कैसे होता?

दादाजी—महोदय, हम जड़ मूर्ति से चेतन का काम नहीं स्वीकार करते, क्योंकि परमात्मा की मूर्ति जो कि जड़ है, केवल उत्तम भावों को जो कि वह भी जड़ ही है, उत्पन्न करने वाली है। शास्त्र और मूर्त्ति परस्पर जुगराफिया और चित्र की तरह सम्बन्ध

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

रखती है। जिसमें शास्त्र तो जुगराफिये की तरह विरागभाव और भगवान् के स्वरूप का वर्णन करने वाला है और प्रतिमा ही इसकी मूर्ति बनाई हुई है और जिस प्रकार शास्त्र जड़ है मगर उत्तम भावों के उत्पन्न करने वाला है उसी तरह मूर्ति भी जड़ अवश्य है, लेकिन अच्छे भावों को (जिन से ईश्वरीय ज्ञान होता है) उत्पन्न करने वाली है, और इस विशाल संसार में ऐसा एक भी मत नहीं है जो मूर्ति पूजा को किसी न किसी प्रकार नहीं मानता हो। यदि कोई किसी मत के व्यक्ति जड़ (पत्थर) मूर्ति को नहीं मानता होगा तो वेद, कुरानशरीफ, अंजिल, बाइबिल आदि अपने धार्मिक पुस्तकों को जो कि जड़ रूप (साकार) है मान और सम्मान अवश्यमेव करता होगा।

आर्य—महात्मन्, पत्थर की बनी हुई गौ कभी दूध नहीं देती इसलिये जड़ मूर्ति की पूजा से चेतन ईश्वर का ज्ञान कभी नहीं होगा और न कुछ दूसरा ही लाभ होगा।

दादाजी—यह आपको बड़ी भूल है कि पत्थर की गौ दूध नहीं देती, यदि थोड़ा भी विचारें तो आप कह सकते हैं कि पत्थर (जड़) की गौ वास्तविक गौ से भी कहीं कहीं अधिक फायदे मन्द है, अच्छा; ध्यान देकर सुनिये—

शिलाजीत, मकरध्वज आदि रसायन और ब्राह्मी आदि बूटियां जड़ पदार्थ है मगर इसके सेवन से लोगों के अनेकों रोग नष्ट होकर शरीर नीरोग और

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

बलिष्ट हो जाता है, अथवा यों कहें कि इन उपर्युक्त रसायनों में गौ दूध से कहीं अधिक गुण है और बुद्धि बढाने की शक्ति है, इसलिये आपको यह मानना पड़ेगा कि उपर्युक्त रसायन रूप जड़ गौ की सेवा से वास्तविक गौ की अपेक्षया कितनी अधिक चेतनता या फायदा पहुंचता है और भी सुनिये—आत्मा का गुण ज्ञान है, अतः आत्मा ही सभी पदार्थों को देख सकता है, आत्मा ही सभी बातों को सुन सकता है, आत्मा ही सभी गन्धों को सूंघ सकता है, आत्मा ही सभी स्पृश्य पदार्थों को स्पर्श कर सकता है, आत्मा ही सभी भोज्य पदार्थों को आस्वादन कर सकता है, आत्मा ही चल सकता है, और आत्मा ही हाथ का काम कर सकता है, लेकिन ऊपर के सभी बातों के सम्पादन करने में आत्मा को उन उन इन्द्रियों की सहायता अवश्य लेनी पड़ती है। जब किसी कारण से कोई इन्द्रिय विकृत होकर उस इन्द्रिय जन्य कार्य को करने में असमर्थ हो जाती है तब अकेला आत्मा ही उस कार्य को करने में कभी सफल नहीं होता, जैसेः—किसी कारण विशेष से किसी की आंखे विनाश हो गई तो यह व्यक्ति किसी तरह भी पदार्थ को नहीं देख सकता। अब आप को इस पर पूर्ण विचार करना चाहिये कि वह व्यक्ति जिसकी जड़ आंखें गायब हो गई और चेतन आत्मा विद्यमान है चीजों को क्यों नहीं देखता। वास्तविक विचार से यहीं कहेंगे कि जड़ आखों के नहीं होने से ही चेतन आत्मा पदार्थ को नहीं देख सकता। इसी तरह कान, नाक, हाथ और पैर आदि इन्द्रियों को बिलकुल खराब हो जाने से आत्मा उन उन इन्द्रियों के द्वारा किये

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

जानेवाले धर्मों (सुनना, सूंघना, चलना-फिरना आदि) को नहीं कर सकता, अतः अब आप ही पक्षपात को छोड़ कर विचार पूर्वक कहें कि जड़ से चेतन को कितना लाभ होता है। इसलिये मेरे प्यारे आर्य महोदय ! तथा अन्य भावुक श्रोतृगण ! यदि आप लोग पक्षपात को छोड़ कर न्याय की दृष्टि से पूर्वोक्त मेरे युक्तियों और प्रमाणों को अच्छी तरह विचार करें तो मूर्त्ति-पूजा अवश्यमेव मानेंगे और जनता में अपने बाहुओं को ऊपर उठाकर कहेंगे कि भाइयों ! 'मूर्ति-पूजा' वास्तव में ठीक है सर्व जन हित कारक है इसलिये प्रत्येक व्यक्ति को प्रतिदिन यथा समय सुरुचि-पूर्ण भाव-भक्ति से 'मूर्ति-पूजा' अवश्य करनी चाहिये।

अनन्तर, काका कालूरामजी और आर्य छज्जूरामजी दोनों ने हाथ जोड़ कर अति विनीत भाव से दादाजी को कहा महात्मन् ! अब हम लोग इस बात को मानते हैं कि 'मूर्त्ति-पूजा' अवश्य करनी चाहिये और इस बात को भी सादर स्वीकार करते हैं कि निराकार ईश्वर की मूर्त्ति (प्रतिमा) बन सकती है, क्योंकि इस बात के न मान ने में हम लोगों की जितनी शंकायें थीं वे सब की सब आप की युक्तियों के द्वारा दूर होगइं, मगर अब सवाल सिर्फ इतना है कि आप कृपा करके वेदों के मन्त्रों से यह सिद्ध करके दिखलावें कि—वेदों में भी निराकार ईश्वर के साकार रूप होने का वर्णन है, क्योंकि वेदों में हम लोगों की अधिक श्रद्धा और विश्वास है।

दादाजी—अच्छा जी, साहब, अब आपके कथनानुसार मैं वेदों के प्रमाणों से निराकार ईश्वर के साकार स्वरूप को

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

और 'मूर्त्ति-पूजा' को सिद्ध करके बतलाता हूँ, खूब ध्यान देकर सुनिये—

पुरुष सूक्त का प्रथम मन्त्र है कि—

"सहस्र शीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपाद् ।
स भूमिं सर्वतः स्पृत्वात्यतिष्ठद्दशाङ्गुलम् ॥"

(यजुर्वेद)

भावार्थ—उस विराट रूपधारी ईश्वर के अनेक शिर हैं, अनेक आखें हैं और अनेक पैर हैं। विराट रूपधारी परमेश्वर सभी ओर से पृथिवी को स्पर्श करता हुआ विशेष रूप से दश अंगुल के बीच में रहता है, अर्थात् नाभि से हृदय तक रहता है। और भी सुनों—

नमस्ते रुद्र, मन्यव उतोत इषवे नमः ।
बाहुभ्यामुतते नमः ।

(अजुर्वेद, अध्याय १६, मंत्र ४८)

भावार्थ—हे रुद्र ! (दुष्टों को रुलाने वाले ईश्वर !) आपके क्रोध को और बाण को नमस्कार हो और आपके दोनों भुजाओं को मेरा प्रणाम हो। अब यहां रूद्र रूप ईश्वर के बाहुओं की स्तुति की गई है, और प्रथम मंत्र में विराट रूप ईश्वर के मुख, हाथ, पैर आदि का वर्णन है।

और भी सुनिये—

"या ते रुद्र ! शिवा तनूरघोरापापकाशिनी
तया नस्तन्वासन्तमया गिरिशं चाभिचाकशीहि"

(यजु० अध्याय० १६, मंत्र ४६)

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

भावार्थ—हे रुद्र ! तुम्हारी जो मूर्त्ति कल्याण करने वाली सुन्दर और पवित्र है, उसके द्वारा हमारा कल्याण बढ़े।

यहां भी 'तनू' शब्द से ईश्वर की साकारता साफ साफ है। और भी सुनिये—

"त्र्यम्बकं यजामहे सुगिन्धं पुष्टिवर्धनम्।
उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात्" ॥
(यजुर्वेद, अध्याय ३ मंत्र ६)

इसका निरुक्त में इस तरह व्याख्यान है—

[त्रीणि अम्बकानि यस्य स त्र्यम्बको रुद्रस्तं यजामहे सुगन्धिं (सुष्ठु गन्धि) पुष्टिवर्द्धनम् (पुष्टिकारकम्) इव, उर्वारुकमिव फलं बन्धनात्—आरोधनात् मृत्योः सकाशात् मुञ्चस्व मां कस्मादिति—एषाम्-इतरेषाम् पराभवति]

इसी तरह महीधर आदि वेद टीकाकारों ने भी उपर्युक्त मंत्र की व्याख्या की है।

ऊपर के व्याख्यान का भावार्थः—हम तीन नेत्र वाले शिवजी की पूजा करते हैं, सुगन्धित पुष्टिकारक पका हुआ खरबूजा जिस तरह अपनी लता से अलग हो जाता है, उसी तरह हमको मृत्यु से अलग करके मोक्षपद की प्राप्ति कराइये।

इससे भी ईश्वर की साकारता सिद्ध होती है, क्योंकि नेत्रों का होना शरीर के विना असम्भव है।

और भी सुनियेः—

"नमस्ते नीलग्रीवाय सहस्राक्षाय मीदुषे।
अथो ये अस्य सत्वानो हन्तेभ्योऽकरन्नमः ॥"
(यजु० अ० १६ मंत्र ८)

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

भावार्थः—नीलकण्ठ, सहस्रनेत्र से संपूर्ण जगत् के देखने वाले इन्द्ररूप वा विराट् रूप, सेचन में समर्थ पर्य्यन्य (मेघ) रूप वा वरुणरूप रुद्र के लिये नमस्कार हो। और इस रुद्र देवता के जो अनुचर देवता हैं उनको भी मैं नमस्कार करता हूँ।

यहां भी सहस्र नेत्रों का होना और नीलग्रीवा होना ईश्वर की साकारता को ही सिद्ध करता है।

और भी सुनियेः—

"प्रमुञ्च धन्वनस्त्वमुभयोरार्त्न्योर्ज्याम् ।
याश्च ते हस्त इषवः पराता भगवो वप" ॥

(यजुर्वेद, अध्याय १६ मंत्र ६)

भावार्थः—हे षडैश्वर्य्य सम्पन्न ! भगवन् ! आप अपने धनुष की दोनों कोटियों में स्थित ज्या (धनुष की डोरी) को दूर करो अर्थात् उतार लो और आपके हाथ में जो बाण हैं उनको भी दूर त्याग दो और हमारे लिये सौम्य स्वरूप हो जाओ।

इससे भी ईश्वर की साकारता सिद्ध होती है, क्योंकि शरीर के बिना हाथ, पैर आदि का होना असम्भ है।

और भी सुनियेः—

"नमः कपर्द्दिने च"

(यजु० अध्या० १६ मंत्र २६)

भावार्थः—कपर्दी अर्थात् जटाजूट धारी ईश्वर को नमस्कार हो।

यहाँ भी ईश्वर की साकारता कही गई है, क्योंकि शिर के बिना जटायें नहीं हो सकतीं।

और भी श्रवण कीजियेः—

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

एषोह देवः प्रदिशोऽनुसर्वाः पूर्वोहजातः स उ गर्भे अंतः।
स एव जातः स जनिष्यमाणः प्रत्यङ्जनास्तिष्ठति सर्वतो मुखः॥

(यजु० अध्या० ३२)

भावार्थः—यह जो पूर्वोक्त ईश्वर सब ही दिशा विदिशाओं में नाना रूप धारण करके ठहरा हुआ है, वही सृष्टि के आरम्भ में हिरण्यगर्भ रूप से उत्पन्न हुआ और वही गर्भ के भीतर आया और वही उत्पन्न हुआ एवं वही फिर उत्पन्न होगा जोकि सबके भीतर (अन्तःकरणों) में ठहरा हुआ है और जो अनेक रूप धारण करके सभी ओर मुखों वाला होरहा है।

इससे तो ईश्वर का शरीरधारी होना एक दम साफ है। और भी सुनिये—

"आयो धर्माणि प्रथमः ससाद ततो वपूंषि कृणुसे पुरूणि"।

(अथर्ववेद ।५।१।१।२)

भावार्थः—हे ईश्वर! जिन आपने सृष्टि के आरम्भ में धर्मों की स्थापना की, उन्हीं आपने बहुत से वपु (शरीर) अवतार रूप धारण किये हैं।

इससे भी ईश्वर के शरीर का होना सिद्ध होता है।

और भी सुनिये—

"एह्यश्मानमातिष्ठाश्मा भवतु ते तनूः"।

(अथर्वण वेद ।२।१२।४)

भावार्थः—हे ईश्वर! तुम आओ और इस पत्थर की मूर्त्ति में स्थित होजाओ और यह पत्थर की मूर्ति तुम्हारी

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

तनू (शरीर) बन जाय।

इसकी पुष्टि में उपनिषद् और ब्राह्मण आदि वेद व्याख्याओं के सैकड़ों प्रमाण मिल सकते हैं। इससे भी ईश्वर की साकारता सिद्ध होती है।

और भी सुनिए:—

"आदित्यँ गर्भं पयसा समङ्धिः सहस्रस्य प्रतिमां विश्वरूपम्। परिवृङ्धि हरसामाभिमंस्थाः। शतायुषं कृणुहि चीयमानः॥"

भावार्थः—सहस्र नामवाला जो ईश्वर है, उसकी स्वर्णादि धातुओं से बनाई हुई मूर्त्ति को पहले अग्नि में डाल कर उसका विकार (मल) दूर करना चाहिये, अनन्तर उस ईश्वर की मूर्त्ति को दृध से धोना और शुद्ध करना चाहिये, क्योंकि, विशुद्ध स्थापना की हुई मूर्त्ति प्रतिष्ठाता-पूजक-पुरुष को दीर्घायु और बड़ा प्रतापी बनाती है।

इससे भी ईश्वर की साकारता और मूर्त्ति-पूजा सिद्ध है, आशा है कि अब आप उपर्युक्त वेद के मंत्रों के भावार्थ के ऊपर अच्छी तरह ध्यान देंगे तो आपको ईश्वर की साकारता और मूर्त्ति पूजा पर अतिशय श्रद्धा और दृढ विश्वास अवश्यमेव होगा।

खैर कुछ और भी सुनिये—

"यदा देवतायतनानि कम्पन्ते दवताः प्रतिमा हसन्ति रुदन्ति नृत्यन्ति स्फुटन्ति स्विद्यन्ति उन्मीलन्ति निमीलन्ति।"····· ·····अथर्वण वेद·····"।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

भावार्थ—जिस राजा के राज्य में शयनावस्था में वा जागृतावस्था में ऐसा प्रतीत हो कि देव मन्दिर काँपते हैं, तो देखनेवालों को कोई दुःख अवश्य होगा, और वह बात उस देश के राजा के लिये भी अच्छी नहीं, अर्थात् राजा को भी कष्ट होगा। इसी तरह देवता की मूर्त्ति, यदि हंसती, रोती, नाचती, अङ्गहीन होती, आंखों को खोलती वा बन्द करती हुई किसीको दृष्टिगोचर हो तो समझना चाहिये कि शत्रु की ओर से कोई न कोई कष्ट अवश्यमेव होगा।

इससे भी ईश्वर की साकारता और प्राचीन समय से मूर्ति का होना साफ साफ प्रकट होता है॥

आर्य्य छज्जूराम शास्त्री और काका कालूराम ने विनीत होकर फिर दादाजी से बोलाः—

दादाजी, आपकी निःशंकयुक्तियों और वेदों के प्रमाणों से तो हम लोगों की 'मूर्त्ति-पूजा' मानने में अब कुछ भी सन्देह नहीं रहा, मगर सवाल अब यह है कि क्या 'धर्म संहिता' (स्मृति शास्त्र) में भी 'मूर्ति-पूजा' का विधान है? क्योंकि धर्म संहिता पर भी हम लोगों की अधिक श्रद्धा है, इसमें जहाँ तक हो सके 'मनुस्मृति' का ही प्रमाण होना चाहिए, क्योंकि सभी स्मृतियों में केवल मनुस्मृति ही हमें विशेष रूप से प्रामाण्य है।

दादाजी—कुछेक मुसकुरा कर अच्छाजी, सुनियेः—

"मैत्रं प्रसाधनं स्नानं दन्तधावन-मज्जनम्।
पूर्वाह्ण एव कुर्वीत देवतानाञ्च पूजनम्॥"

(मनुस्मृति, अध्याय ४ श्लोक १२५)

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

भावार्थः—शौचादि स्नान और दातन आदि करना और देवताओं का पूजन प्रातः काल में ही करना चाहिये। इस मनुस्मृति के श्लोक से देवताओं की पूजा से मूर्त्ति पूजा ही सिद्ध होती है।

और भी सुनियेः—

'नित्यं स्नात्वा शुचिःकुर्याद् देवर्षि-पितृ-तर्पणम्।
देवताभ्यर्चनं चैव समिदाधानमेव च॥

(मनुस्मृति अध्याय ४ श्लोक)

भावार्थः—प्रतिदिन स्नान करके पवित्र होकर देव, ऋषि तथा पितरों का तर्पण अपने अपने गृह्यसूत्र (पारस्पर गृह्य सूत्रादि) के अनुसार करना चाहिए, अनन्तर शिव विष्णु आदि देव प्रतिमाओं के संमुख पूजन करना चाहिये, फिर विधि पूर्वक समिदाधान (हवन) कर्म करना चाहिये। इससे भी मूर्ति की पूजा की सिद्धि होती है।

आर्य्य—महात्मन्, हम लोग 'देवताभ्यर्चन' शब्द से माता, पिता और गुरु आदि का आदर सत्कार को मनाते हैं।

दादाजी—नहीं जी, आपका यहां यह मानना भारी भूल है क्योंकि मनुस्मृति के द्वितीया ध्याय में माता, पिता, गुरु आदि मान्यों की पूजा, आदर, सेवा आदि अलग अलग कही है, इसलिये उस अर्थ को यहां नहीं ले सकते।

आर्य—महात्मन्, खैर यह बात भी आप की हम ने मान ली, मगर 'देवता अर्चन' शब्द से "देवताओं की मूर्त्तियों

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

की सम्मुख पूजा" आप अर्थ करते हैं यहां पर मूर्त्ति तो अपनी तरफ से अधिक जोड़ते हैं।

दादाजी—नहीं जी, नहीं, मैं अपनी तरफ से कुछ नहीं फरमाता मैंने तो शास्त्रों की बातें ही आप से कही—सुनिये—पाणिनीय व्याकरण, अष्टाध्यायी के अध्याय ५ पाद ३ सूत्र ९९ के अनुसार वासुदेव और शिव की प्रतिमाओं का नाम भी "कन्" प्रत्यय का "लुप्" होने पर वासुदेव और शिव ही होता है। इसी तरह देवताओं की प्रतिमाओं का नाम भी 'कन्' का 'लुप' हो जाने पर "देवता" ही कहा जा सकता है। जैसे—

"देवतायाः प्रतिकृतिर्देवता, तस्या अभ्यर्चनं देवताभ्यर्चनम्"

अर्थात् देवता की प्रतिमा देवता कही जा सकती और उसके सम्मुख होकर जो पूजन उसे "देवताभ्यर्चन" कहते हैं। इसलिये मनुस्मृति में कहे हुये 'देवताभ्यर्चन' शब्द का स्पष्ट अर्थ यह है कि नियम पूर्वक पवित्र होकर शिव, विष्णु आदि देवमूर्त्तियों की पूजा अवश्यमेव करनी चाहिये। एवम् मनुस्मृति के टीकाकारों की राय भी देव-मूर्त्तियों के पूजने में ही है, जैसे—

(१) गोविन्दराजः-(देवतानां हरादीनां पुष्पादिनाऽर्चनम्)।

(२) मेधातिथिः-(अतः प्रतिमानामेव एतत्पूजन विधानम्)।

(३) कुल्लूकभट्टः-(प्रतिमादिषु हरि-हरादि-देव-पूजनम्)।

(४) सर्वज्ञनारायणः-(देवतानाम् अर्चनं पुष्पाद्यैः)।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

भावार्थः-(१) पण्डित गोविन्दराजजी का कहना है कि यहां देवता शब्द से शिव आदि देवता हैं और पुष्प आदि से उनके पूजन का नाम "देवताभ्यर्चन" है।

भावार्थः-(२) मेधातिथि कहते हैं कि "देवताभ्यर्चन" शब्द का अर्थ प्रतिमाओं का ही पूजन अभीष्ट है। इसी तरह (३) (४) पण्डित कुल्लूक भट्ट और सर्वज्ञ नारायण को उपर्युक्त अर्थ ही स्वीकार है। अतः एव इन प्रमाणों से देवताओं की पूजा करने से मूर्त्ति-पूजा ही सिद्ध होती है।

आर्य—महात्मन्, हमारे धर्म शास्त्रों में तो देवताओं का अर्थ विद्वान् माना गया है, क्योंकि "शतपथ ब्राह्मण" में लिखा है कि "विद्वान्सो वै देवाः" अर्थात् विद्वान् ही देवता है, इसलिये 'देव-मूर्त्ति' का अर्थ शिव आदि देवता की प्रतिमा आपका कहना बिलकुल ठीक नहीं मालूम होता।

दादाजी—सुनिये साहब, आप यहां पर देव शब्द का अर्थ विद्वान् नहीं कर सकते, क्योंकि "विद्वान्सो वै देवाः" यह "शतपथ ब्राह्मण" का वाक्य है, मगर इसी शतपथ के छट्ठी कण्डिका में "मीनावतार" का विस्तार पूर्वक वर्णन किया है, इसलिये जब आप अवतार को मान लिया तो 'मूर्त्ति-पूजा' को स्वीकार करना अपने आप सिद्ध होगया और दूसरी बात यह है कि यदि यहाँ आप देवता शब्द का अर्थ विद्वान मानेंगे तो प्रातःकाल में ही विद्वान की पूजा करनी चाहिये यह असंगत हो जायगा। यदि किसी

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

तरह इस बात को मान भी लिया जाय तो भी आप जड़ पूजा से अलग किसी तरह भी नहीं हो सकते, क्योंकि आप तो विद्वान् के शरीर को ही पूजा करेंगे, मगर शरीर तो विद्वान् का भी जड़ ही है, इसलिये वह पूजा भी जड़ की ही पूजा हुई। आप आशङ्का करेंगे कि विद्वान् के शरीर में चेतन आत्मा के होते हुये चेतन शरीर के पूजने से हम जड़ पूजक नहीं हो सकते, तो आप की ही तरह मूर्त्ति पूजक भी मूर्त्ति के पूजने से कभी भी जड़ पूजक नहीं कहा सकता, क्योंकि आप इस बात को मानते हैं कि ईश्वर सर्व व्यापक है, तो क्या सर्व व्याप्य से एक मूर्त्ति ही अलग रह गई? इसलिये आप को यहां देवता शब्द का अर्थ विद्वान नहीं मान कर शिव, विष्णु आदि देवता ही मानना चाहिये।

और यदि इतने पर भी आप अपना बेकार हठ को नहीं छोड़ते तो और भी सुनियेः—

तडागान्युदपानानि वाप्यः प्रश्रवणानिच।
सीमासन्धिषु कार्याणि देवतायतानानि च॥

(मनुस्मृति, अत्याय ८ श्लोक २४८)

भावार्थः—तडाग (तालाब), उदपान (प्याऊ), वापी (बावड़ी), प्रश्रवण जिस जगह से पानी निकल कर बहता हो ऐसी जगह, झरना आदि) और देवतायतन (देव मन्दिर) इन सबों को सीमा सन्धियों (ग्राम, नगर आदि के अन्त) में करना चाहिए।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

अब आप देखिये और अच्छी तरह विचारिये कि उपर्युक्त मनुस्मृति के श्लोक में यदि देवता शब्द का अर्थ विद्वान् करेंगे तो वह असंगत और व्यर्थ हो जायगा, इसलिये देवता शब्द का अर्थ शिव, विष्णु आदि देवता ही यहां वास्तविक और प्रकरणानुकूल एवं मनुस्मृति के प्रसिद्ध टीकाकारानुसार बिलकुल ठीक है।

आर्य—अतिशय विनीत होकर, दादाजी से पूछा—महात्मन् मूर्ति के विषय में स्मृति की जो मेरी आशंका थी वह दूर हो गई, अब कृपाकर आप यह दिखावें कि क्या दर्शन-शास्त्र में भी मूर्त्ति पूजा का उल्लेख कहीं पर है ?

दादाजी—हां साहिब, दर्शन शास्त्र में भी 'मूर्ति पूजा' सम्बन्धी बातें हैं, अच्छा, अब उन्हें भी आप ध्यान से सुनियेः—

महर्षि पतञ्जलि कृत 'योग दर्शन' में योग की सिद्धि के लिये अनेक उपाय कहे गये हैं, जिनमें समाधिपाद के २३ वें सूत्र में लिखा है कि 'ईश्वर के प्रणिधान' से योग की सिद्धि होती अर्थात् कैवल्य पद की प्राप्ति होती है। प्रणिधान का अर्थ है कि ईश्वर विषयक धारणा ध्यान और समाधि इनकी सिद्धि होने से योग की सिद्धि होती है मगर निराकार ईश्वर के अनिर्वचनीय होने से उनकी धारणा, ध्यान और समाधि की सिद्धि अच्छे विद्वानों के लिये भी अत्यन्त कठिन टेढी-खीर है। इसलिये भगवान् पतञ्जलिने लोगों की सुलभता के लिए प्रथम चित्त का प्रसादन ही बतलाया, क्योंकि चित्त अत्यन्त

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

चञ्चल है। उस चित्त प्रसाधन के लिये भी प्राणायाम की सिद्धि आदि अनेक उपाय बतलाया, उनमें अधिक सुलभता के लिये एक सूत्र लिखा है कि—

"वीतरागविषयं वा चित्तम्"

(यो० द० समाधिपाद० सूत्र ३७)

इसका भावार्थ यह है कि—योगी को अपने चित्त को किसी वीतराग के चित्त जैसा कर लेना चाहिये, मगर वैसा चित्त करना उसके गुण कर्म और स्वभाव के अभ्यास से ही संभव है, और उसके गुण, कर्म, स्वभाव के अभ्यास की स्थिरता प्रथम उसकी मूर्त्ति को देखे या ध्यान में लाये विना नितरां असम्भव है, इसलिये दर्शन शास्त्र में भी मूर्त्ति-पूजा प्रत्यक्ष है।

और इस सूत्र की टीकाकार भी यही लिखते हैं, जैसे—

"वीतरागं सनकादिचित्तं तद्विषयध्यानात् ध्यातृचित्तमपि तद्वत् स्थिरस्वभावं भवति, यथा कामुकचिन्तया चित्तमपि कामुकं भवति"।

भावार्थः—राग रहित सनकादि ऋषियों का चित्त था, उन ऋषियों के ध्यान करने से ध्यानी योगी का भी चित्त वैसा ही स्थिर स्वभाव वाला हो जाता है, जैसे कामी की चिन्ता करने से चित्त कामुक हो जाता है। और इसके आगे महर्षि पतञ्जलि लिखते हैं कि—

"यथाभिमतध्यानाद्वा"

(योगदर्शन, समाधिपाद, सूत्र ३९)

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

इसका भाव यह है कि—"किं बहुना यदेवाभिमतं हृदि हरिहर-मूर्त्यादिकं तदेवादौ ध्यायेत्, तस्मादपि ध्यानान्नियतस्थितिकं भवतीत्यर्थः ॥

भावार्थः—बहुत कहने से क्या ? अपना हृदय में जो ही अभीष्ट हो उन्हीं में से किसी विष्णु वा शिव आदि देव मूर्त्तियों को पहले ध्यान करना चाहिये इस ध्यान से भी चित्त की स्थिरता होती है।

इसी तरह अन्य दर्शनों में भी मूर्त्ति-पूजा विषय का प्रतिपादन कल्याण मार्ग के लिये अनेक जगह है। इससे हठ-दुराग्रह छोड़कर मध्यस्थ बुद्धि के द्वारा विचार करके अब आपको मान लेना चाहिये कि 'मूर्त्ति पूजा' वास्तव में कल्याणकारक है और वेद, धर्मशास्त्र, दर्शनशास्त्र आदि सभी मान्य ग्रन्थों में मूर्त्ति-पूजा को करना अच्छी तरह बतलाया है।

आर्य—महात्मन्, अब हमें वेद, धर्मशास्त्र और दर्शन शास्त्रों के प्रमाणों से एवं आपकी अलौकिक युक्तियों से तो 'मूर्त्ति-पूजा' के विषय में कुछ भी संशय नहीं रहा. मगर अब कृपया यह बतलावें कि—क्या 'मूर्त्ति-पूजा' परम्परा से चली आई है या नवीन है ? यदि प्राचीन है तो इसका किसी प्रामाणिक इतिहास ग्रन्थों में कहीं उल्लेख है ?

दादाजी—सुनियेजी, 'मूर्त्ति-पूजा' परम्परा से चली आ रही है, इसलिये यह अत्यन्त प्राचीन है इसमें हम आपको सर्वमान्य ऐतिहासिक प्रमाण देते हैं, जिससे आपको यह मालुम होगा कि हमारे और आपके पूर्वज भी मूर्त्ति-पूजा को मानते थे, खूब ध्यान देकर सुनिये:—

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

"ततो निषादराजस्य हिरण्यधनुषः सुतः ।
एकलव्यो महाराज ! द्रोणमभ्याजगामह ॥
न स तं प्रतिजग्राह नैषादिरिति चिन्तयन् ।
शिष्यं धनुषि धर्मज्ञस्तेषामेवान्ववेक्षया ॥
स तु द्रोणस्य शिरसा पादौ स्पृष्ट्वा परन्तपः ।
अरण्यमनुसम्प्राप्य कृत्वा द्रोणं महीमयम् ॥
तस्मिन्नाचार्यवृत्तिञ्च परमामास्थितस्तदा ।
इष्वस्त्रे योगमातस्थे परं नियममास्थितः ॥
परया श्रद्धयोपेतो योगेन परमेण च ।
विमोक्षादानसन्धाने लघुत्वं परमाप सः ॥
.....इत्यादि ॥

[महाभारत, आदि पर्व अध्याय १३४]

भावार्थ—जब द्रोणाचार्य के धनुर्विद्या की प्रशंसा दूर देशों तक फैल गई, तब एक दिन निषदराज हिरण्यधनुष्य का लड़का एकलव्य धनुर्विद्या को सीखने के लिये आचार्य द्रोण के पास आया। आचार्य्य द्रोण ने शूद्र जानकर उसको धनुर्वेद की शिक्षा नहीं दी। तब वह एकलव्य अपना हृदय में द्रोणाचार्य को गुरु मानकर और उनके चरणों को अपने मस्तक से छूकर बन में चला गया और वहां जाकर द्रोणाचार्य्य का एक मिट्टी की मूर्त्ति को बनाकर उसके सामने धनुर्विद्या का अभ्यास करने लगा। श्रद्धा की अधिकता और चित्त की एकाग्रता के कारण एकलव्य थोड़े ही दिनों में धनुर्विद्या में बहुत प्रवीण हो गया।

एक समय द्रोणाचार्य के साथ कौरव और पाण्डव मृगया (शिकार) खेलने के लिये बन में गये, साथ में पाण्डवों का

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

एक प्यारा कुत्ता भी था वह कुत्ता इधर उधर घूमता हुआ वहां जा निकला जहाँ एकलव्य धनुर्विद्या का अभ्यास कर रहा था, कुत्ता एकलव्य को देखकर भूंकने लगा तब एकलव्य ने सात बाण ऐसे चलाये कि जिनसे उस कुत्ते का मुख बन्द हो गया औ कुत्ता शीघ्र ही दुःखित होता हुआ पाण्डवों के पास चला आया। फिर शीघ्र ही पाण्डवों ने इस विचित्र रीति से कुत्ते को मारने वाले को ढूंढ़ा तो आगे कुछ दूर जाने पर देखा कि—एकलव्य अपने सामने एक मिट्टी की मूर्ति को रख कर धनुर्विद्या को सीख रहा है। तब अर्जुन ने उससे पूछा कि—महाशय, आप कौन हैं? तब उसने उत्तर में कहा कि—मेरा नाम एकलव्य है और हम द्रोणाचार्य्य के शिष्य हैं। यह सुनते ही अर्जुन द्रोणाचार्य्य के पास गया और उनसे कहने लगा कि—महाराज, आपने तो मुझ से कहा था कि—हमारे शिष्यों के बीच धनुर्विद्या में सबसे प्रवीण तुम ही होगे, किन्तु एकलव्य को तो आपने मुझ से भी अच्छी शिक्षा दी है। द्रोणाचार्य्य ने कहा—मैं तो किसी एकलव्य को नहीं जानता हूँ, चलो देखूं कौन है?

वहाँ जाने पर एकलव्य ने आचार्य द्रोण के पदरज को अपने मस्तक पर रक्खा, और कहा कि आपकी मूर्त्ति की पूजा से ही मुझे धनुर्विद्या में ऐसी योग्यता प्राप्त हुई है, आप मेरे गुरु हैं। आचार्य द्रोण ने कहा कि फिर तो हमारी गुरु दक्षिणा अदा करो। एकलव्य ने कहा कि आप जो कहें सो देने के लिए तैयार हूं। आचार्य द्रोण ने अर्जुन को प्रसन्न करने के लिये एकलव्य से दक्षिणा में दाहिने हाथ की अंगूठा मांगी। एकलव्य सहर्ष दे दिया।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

अंगूठा न रहने के कारण फिर एकलव्य में वैसी लाघवता नहीं रही और द्रोणाचार्य की प्रतिज्ञा भी पूरी हुई, अर्जुन खुश हो गये।

अब देखिये महाशय, द्रोणाचार्य की मूर्त्ति को पूजने ही से धनुर्विद्या में अर्जुन से भी अच्छा प्रवीण एकलव्य हो गया था। इसलिये जो लोग प्रति दिन श्रद्धा और भक्ति से वीतराग देव ईश्वर की मूर्त्ति को पूजेंगे उनको परम कल्याण और सफल मनोरथ क्यों नहीं होगा? क्योंकि उपर्युक्त दृष्टान्त एक प्रसिद्ध इतिहास महा भारत का है।

और भी सुनियें—

जिस समय मर्य्यादा पुरुषोत्तम भगवान् रामचन्द्रजी महाराज रावण आदि राक्षसों को मारकर पुष्पक विमान के द्वारा अयोध्याको आ रहे थे, उस समय रास्ते में अपनी स्त्री सीता को उन्हों ने उन उन स्थानों को बतलाया जहां जहां वे सीता के वियोग में घूमते रहे—जैसे—

" एतत्तु दृश्यते तीर्थं सागरस्य महात्मनः।
यत्र सागरमुत्तीर्य्य तां रात्रिमुषिता वयम्॥
एष सेतुर्मया बद्धः सागरे लवणार्णवे।
तव हेतोर्विशालाक्षि! नलसेतुः सुदुष्करः॥
पश्य सागरमक्षोभ्यं वैदेहि! वरुणालयम्।
अपारमिव गर्जन्तं शङ्खशुक्तिसमाकुलम्॥
हिरण्यनाभं शैलेन्द्रं काञ्चनं पश्य मैथिलि!
विश्रामार्थं हनुमतो भित्त्वा सागरमुत्थितम्।
एतत्कृष्णो समुद्रस्य स्कन्धावार निवेशनम्॥

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

अत्र पूर्वं महादेवः प्रसादमकरोद्विभुः ।
एतत्तु दृश्यते तीर्थं सागरस्य महात्मनः ॥
सेतुबन्धमिति ख्यातं त्रैलोक्येन च पूजितम् ।
एतत्पवित्रं परमं महापातकनाशनम् ॥

[वाल्मीकीय रामायण उत्तर काण्ड अध्याय]

भावार्थः—भगवान् श्री रामचन्द्रजी कहते हैं कि हे सीते ! यह महात्मा समुद्र का तीर्थ दीख रहा है, जहां हमने एक रात्रि को निवास किया था। यहां जो सेतु दीख रहा है, इस को नल की सहायता से तुम को प्राप्त करने के लिये हमने बान्धा था। जरा समुद्र को तो देखो जो वरुण देव का घर है, इस में ऐसी ऊंची ऊंची लहरें उठ रही हैं, जिनकी ओर छोर भी नहीं मिलती, अनेक प्रकार के जल-जन्तुओं से भरे तथा शंख और सीपों से युक्त इस समुद्र में से निकले हुये सुवर्ण-मय इस पर्वत को देख जो हनुमान के विश्राम के लिये समुद्र के वक्षःस्थल को फाड़ कर उत्पन्न हुआ है। यहीं पर विभु व्यापक श्री महादेवजी ने हमें वरदान दिया था। यह जो महात्मा समुद्र का तीर्थ दीखता है, सो सेतुबन्ध नाम से प्रसिद्ध है और तीनों लोकों से पूजित है। यह परम-पवित्र है और महापातकों को नाश करने वाला है।

यहां अन्तिम दो श्लोकों पर वाल्मीकीय रामायण के संस्कृत टीकाकार लिखते हैं कि—

"सेतोर्निर्विघ्नता सिद्धये समुद्र प्रसादानन्तरं शिवस्थापनं रामेण कृतमिति गम्यते, कूर्म-पुराणे रामचरिते तु अत्र स्थने।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

स्पष्टमेव लिङ्गस्थापनमुक्तं त्वत्स्थापित-लिङ्ग-दर्शनेन ब्रह्महत्यादि पापक्षयो भविष्यतीति महादेव-वरदानं च स्पष्टमेवोक्तम्, "सेतुं दृष्ट्वा समुद्रस्य ब्रह्महत्या व्यपोहती" ति स्मृतेः ॥

भावार्थः—सेतु की निर्विघ्नता पूर्वक सिद्धि (तैयार) के लिये रामचन्द्रजी ने समुद्र के खुश होने के बाद महादेव की मूर्त्ति (प्रतिमा) का स्थापन और पूजन किया था। कुर्मपुराण में तो इस प्रकरण में रामचन्द्रजी का 'लिंग स्थापन' और महादेवजी के वरदान का साफ साफ वर्णन है कि तुम से स्थापित किये हुये शिव मूर्त्ति के दर्शन करने से ब्रह्महत्यादि महापापों का नाश होगा और स्मृति में भी लिखा है कि—समुद्र का सेतु के दर्शन करने से बड़े बड़े पापों का नाश होता है" ॥

और भी लिखा है कि—

"देवागाराणि शून्यानि न भान्तीह यथा पुरा।
देवतार्चाः प्रविद्धाश्च यज्ञगोष्ठास्तथैव च ॥"

(वाल्मीकीय रामायण, आदिकाण्ड)

यह उस समय की बात है, जिस समय महाराज दशरथजी अपने प्रिय पुत्र श्रीरामचन्द्रजी के वियोगमें मर गये और भरत एवं शत्रुघ्न अपनी ननिहाल में थे, इन दोनों को बुलाने के लिए अयोध्या से दूत भेजा गया और भरतजी दूत के मुख से पिता की मृत्यु को सुनते ही अपने भाई शत्रुघ्न के साथ अयोध्या को प्रस्थान कर दिये। जब भरतजी अयोध्या के पास पहुँचे तो उन्होंने अनेक अशुभ चिन्ह देखे, उन अशुभ चिन्हों में से कुछ चिन्ह उपर्युक्त श्लोक में आया है, जिसका भावार्थ नीचे दिया जा रहा है:—

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

भावार्थः—भरतजी अपने मन में विचार करते हैं कि आज अयोध्या में देवताओं के मन्दिर शून्य दीख रहे हैं और वे देव मन्दिर आज वैसे नहीं शोभ रहे हैं जैसे पहले शोभते थे, देव प्रतिमायें (मूर्त्तियां) पूजा रहित हो रही हैं और उनके ऊपर धूप-दीप-पुष्पादि चढ़े हुये नहीं दीखते, तथा यज्ञों के स्थान भी यज्ञकार्य से विरहित हैं।

इसके बाद दादाजी ने फिर कहा कि—कहिये श्रीमान् छज्जूरामजी और काकाजी, क्या अब भी आपको मूर्त्ति-पूजा के विषय में कुछ सन्देह बाकी है ? क्योंकि पूर्वोक्त तीनों प्रमाण प्रसिद्ध ऐतिहासिक ग्रन्थ महाभारत और वाल्मीकीय रामायण के हैं, जिनसे साफ मालुम होता है कि हमारे और आपके पूर्वज देवमूर्त्ति पूजक थे, लोग आस्तिक थे ईश्वर के प्रति श्रद्धा और भक्ति पूर्ण थी, चूंकि यह बात त्रेता और द्वापर युग की है, इसलिये मूर्त्ति-पूजा अत्यन्त प्राचीन है, लाखों वर्ष पहले से मूर्त्ति-पूजा आर्यों के यहां होती आ रही है।

आर्य और काकाजी, अत्यन्त विनीत होकर—महात्मन्, आपके उपदेशों से अब हम लोगों को मूर्त्ति-पूजा के विषय में कुछ भी सन्देह नहीं रहा, मगर अब सवाल शिर्फ इतना है कि—'मूर्त्ति पर' फूल, फल, चन्दन, धूप, दीप, अक्षत और मिष्टान्न आदि पदार्थ क्यों चढ़ाते हैं क्योंकि फूलों को मूर्त्ति पर चढाने से जीव हत्या होती है और उसका पाप फल पुजारी को होता है, एवं ईश्वरमूर्त्ति जब रागद्वेष रहित है तो फिर उस पर अक्षत और मिष्टान्न आदि चढाने की क्या आवश्यकता ?

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

दादोजी—महाशयजी, आप अपने इन प्रश्नों का उत्तर ध्यान देकर सुनिये:—

मूर्तिक-पूजक मूर्ति पर फूल, फल, चन्द, धूप, दीप आदि पदार्थ इसलिये चढ़ाते है कि—वस्तु के बिना भाव नहीं होता और भाव के बिना दृढ़ भक्ति नहीं हो सकती और दृढ़ भक्ति के बिना ईश्वरीय ज्ञान कठिन ही नहीं बल्कि असम्भव है, इसलिये मूर्तिको फूल फल आदि लेकर पूजते हैं, और फूल फल आदिके चढ़ाने से जो आप हिंसा को मानते हैं, वह निरर्थक है, देखिये 'योगदर्शन' में हिंसा के विषय में क्या लिखा हुआ है ? जैसे—योग दर्शन के २ पाद २८ वां सूत्र में लिखा है कि—

योग के अंगों के अनुष्ठान (सविधि-साधन) से ज्ञानकी अर्थात् पृथिवी आदि तत्त्व विषय की वृद्धि होती है, यह ज्ञान-वृद्धि तब तक होती है जब तक योगी को प्रकृति पुरुष का साक्षात्कार याने मोक्ष या ब्रह्मानन्द वा परमसुख किम्बा परम-शान्ति नहीं होती।

उक्त योग के अंग आठ हैं, जैसे—यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि।

इनमें प्रथम-यम पांच प्रकार का है, जैसे—अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह।

अहिंसा का सीधा सादा अर्थ है—किसी प्राणी को किसी प्रकार का कष्ट नहीं पहुंचाना, परन्तु इस सूत्र के टीकाकार लिखते हैं कि—

"शौचाचमनादौ अपरिहार्यहिंसायां तु न दोषः।

अर्थात् शौच (पाखाना, पेशाब, स्नान आदि) में और

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

आचमन (पानी पीना, कुल्ला करना आदि) एवं स्वास प्रस्वास लेना और चलना फिरना एवं कृषि आदि कार्यों में जिनमें कि अपरिहार्य हिंसा हैं उनमें दोष नहीं। निचोड़ यह निकला कि जो नित्य करणीय कर्म है और जिससे अपनी तथा दूसरे की आत्मा को भी कल्याण हो, उसमें यदि कोई अज्ञात (अनजान) हिंसा भी हो जाय तो दोष नहीं, क्योंकि एक तो जानबूझ कर वह हिंसा नहीं हुई और दूसरा उस कर्म में (जिसमें वह अनजान हिंसा हुई है) अधिक पुण्य के होने से कोई भी पाप भागी नहीं हो सकता है।

पहले कहा जा चुका है कि वस्तु के विना भाव उत्पन्न नहीं हो सकता और भाव के बिना दृढ़ भक्ति नहीं हो सकती और दृढ़ भक्ति के बिना ईश्वरीय ज्ञान होना उसी तरह असम्भव है जैसे आधार के बिना आधेय का स्थिर होना असम्भव है, इसलिये फूल, फल आदि को मूर्ति पर चढ़ाना परम आवश्यक है और फूल, फल, धूप, दीप आदि को मूर्ति पर चढ़ाते समय सुचतुर श्रद्धालु आस्तिक मूर्ति पूजक लोग प्रत्येक वस्तु को अर्पण करने के समय में निम्न लिखित भावना करते हैं, जैसे—

"फूल"

फूलों को मूर्त्ति पर चढ़ाने के समय में भक्तिमान पुजारी यह भावना करते हैं कि—हे भगवान्! ये जो फूल हैं, वे कामदेव के बाण (काम के बढ़ाने वाले) हैं और मैं अनेक जन्मों से सांसारिक विषयों में डूबा हुआ हूं आप वीतराग हैं और कामदेव को पराजित किये हैं इसलिये इन फूलों को आपके

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

प्रति समर्पण करके आप से यह सविनय प्रार्थना करता हूँ कि ये कामदेव के बाण जो अनेक योनियों से मुझे विषय वासना सम्बन्धी दुःख को दे रहे हैं, आपकी भक्ति से अब आगे दुःख नहीं दें.....इत्यादि।

" फल "

मूर्ति के सामने फल रखने के समय में यह प्रार्थना करते हैं कि हे भगवान्! आपकी भक्ति का मुक्तिरूप फल मुझे प्राप्त हो।

" चन्दन, केशर, कस्तूरी आदि "

इन सुगन्धित वस्तुओं को चढ़ाते समय यह भावना करते हैं कि हे ईश्वर! इनकी सुगन्ध से दुर्गन्ध जिस तरह दूर भागती है उसी तरह आप की भक्ति से हमारी बुरी विषय-वासना दूर होजाय।

" धूप "

धूप देने के समय में ऐसी भावना करते हैं कि, हे भगवान्! जिस तरह धूप अग्नि में जल कर राख हो जाता है उसी तरह आप की दृढ़ भक्ति से मेरे सब पाप जल कर राख हो जाय और जैसे यह धूआं ऊपर को ही जाती है वैसे ही हम भी उर्ध्व लोक (मोक्ष, कैवल्य) को जावें।

" दीप "

मूर्त्ति के सामने दीपक दिखाते समय यह भावना करते हैं कि हे ईश्वर! जिस तरह दीपक के प्रकाश से अन्धकार दूर हो

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

आता है उसी तरह आप की भक्ति रूप दीपक से मेरे हृदय रूपे मन्दिर में केवल ज्ञान रूप प्रकाश होकर अन्धकार का नाश हो।

" अक्षत, चावल "

अक्षत चढ़ाते समय यह भावना करते हैं कि हे भगवान्! हम इन अक्षतों को आप को सर्मपण करते हैं और इन अक्षतों की पूजा से हमको आपकी अक्षत भक्ति की प्राप्ति हो और अक्षत सुख-शान्ति की भी प्राप्ति हो।

" मिष्टान्न "

मिष्टान्न (मिठाई) अर्पण करते समय यह भावना करते हैं कि हे ईश्वर! हम अनादि काल से इन वस्तुओं को भक्षण करते आये हैं, मगर अभी तक तृप्ति नहीं हुई, इसलिये इन्हें आप को समर्पण कर आपसे प्रार्थना है कि हम भी आपकी भक्ति के प्रताप से इन वस्तुओं से तृप्त हो जावें अर्थात् मुक्त हो जावें। अथवा एक ही बार यह प्रार्थना करते हैं कि हे ईश्वर! वीतराग परमात्मा! हमें संसार की ये पूर्वोक्त सभी चीजें मोहित कर रही हैं और आपने उन सभी पदार्थों को त्याग दिया है, आप निर्विकार वीतराग हैं, इसलिये आप की भक्ति से हमारी भी इन पदार्थों से मुक्ति हो और हमें भी आप के जैसी सुख-शांति और वैराग्य उत्पन्न हो।

इन बातों को कह कर दादाजी ने फिर कहा कि—कहिये कालूरामजी और आर्य छज्जूरामजी महाशय, क्या अब भी आप को 'मूर्त्ति-पूजा' के विषय में कुछ सन्देह है? दोनों

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

हाथ जोड़ कर अत्यन्त विनीत भाव से बोलाः– नहीं महात्मन् ! हमें अब मूर्त्ति-पूजा के विषय में कुछ भी संशय नहीं हैं, आप की युक्तियों और प्रमाणों से हमारे सभी भ्रम दूर हो गये, इतने दिन हम अज्ञानता के वश होकर भूले हुये थे, इसीलिये मूर्त्ति-पूजा में विश्वास नहीं था, श्रद्धा नहीं थी और भक्ति का तो नाम निशान भी नहीं था, अतः मूर्त्ति-पूजा की निन्दा ही करते थे, इसलिये हम सर्वज्ञ विभु वीतराग भगवान से प्रार्थना करते हैं कि हे प्रभो ! आप के चरणों की अटल भक्ति दिनों दिन हम में बढ़े और पहले की सभी भूल चूक से उत्पन्न दुष्कर्म-परिणाम आप की भक्ति के पुण्य फल से विनाश होकर मुझे शाश्वत सुख-शान्ति की प्राप्ति हो, और हम यह प्रतिज्ञा करते हैं कि—अब सर्वदा प्रतिदिन 'मूर्त्ति-पूजा' करेंगे और मनुष्यमात्र को 'मूर्त्तिपूजा' करनी चाहिये। इसके बाद दादाजी ने मौलवी अबदुल हुसेन की तरफ नजर करके बोले कि—क्यों मौलबी साहब, आप तो मूर्त्ति को मानते हैं ?

मौलबी—नहीं जी, नहीं, हम मूर्त्ति को नहीं मानते, क्या आप यह नहीं जानते हैं कि हमारा मज्झब मूर्त्ति पूजक नहीं है ? हम लोग हिन्दूओं की तरह अन्ध विश्वासी नहीं हैं जो मूर्त्ति को पूजा करें, क्या पत्थर भी कभी खुदा हो सकता है ? और कोई भी अकलमन्द जड़ पत्थर आदि में खुदा को रहना मन्जूर कर सकता है ? इसलिये हम से ऐसा सवाल करना आप को बिलकुल बेकार है।

दादाजी—एक कागज के टुकड़े पर 'खुदा' लिख कर मौलवी से कहा, क्या मौलवी साहब, आप इस कागज के

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

टुकड़े के ऊपर अपने पैर रख सकते हैं ?

मौलवी—लाल लाल आंखें करके कहने लगा, क्या आपको धर्म और जान का भय नहीं ? जो ऐसी बदतमीजी बातें कर रहे हो, क्या तुम्हें खुदा का कुछ भी भय नहीं ? जो इस पर मुझे पैर रखने को कहते हो। क्या तुम्हें यह मालूम नहीं कि हम लोग अपने धर्म के ऊपर कुर्बान होने के लिये भी हमेशा तैयार रहते हैं।

दादाजी—क्योंजी, मौलवी साहब, आप बिना शोचे समझे इतने रंज क्यों हो गये ? अब भी जरा शोचिये तो सही कि—पहले मैंने आप से क्या कहा था और अब क्या कह रहा हूँ ? जो आप बहुत जल्द ही इतने गुस्से में आगये, मैं ने तो आप से सिर्फ यही पूछा कि, क्या आप इस कागज के टुकड़े पर अपना पैर रख सकते हैं ? इतने ही में आप हद्द से बाहर हो गये और मुझे बहुत खोटी खरी सुननी पड़ी, इस से तो मुझे साफ साफ मालुम होता हैं कि आप अपने मूंह से जड़ चीजों को आदर करने लग गये, यह क्या ?

मौलवी—हम ने कब जड़ का आदर किया है ?

दादाजी—क्या कागज और स्याही जड़ नहीं है ?

मौलवी—हां हां जड़ नहीं तो और क्या है ?

दादाजी—मौलवी साहब, यदि ऐसी बात है तो आप इतने गुस्से में आकर हद्द से बाहर क्यों हो गये ? क्योंकि, इसमें कागज का टुकड़ा और स्याही इनके अलावह

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

और कोई तीसरी चीज नहीं है, न तो इस में खुदा है और न इस में उनका पैर है या न हाथ ही है, फिर आप का रंज कैसा ?।

मौलवी—हां जी हां, बस इस में खुदा का नाम साफ लिखा हुआ मौजूद है, इस पर हम अपना पांव कैसे रख सकते हैं ?

दादाजी—जब आप कागज और स्याही से लिखा हुआ खुदा के नाम पर कुर्बान होते हैं तो फिर उनकी मूर्त्ति पर कुर्बान क्यों नहीं होते ? और आप यह कैसे कह सकते हैं कि हम जड़ चीजों को नहीं मानने। खैर आप यह तो बतलावें कि आप लोग माला के मणे के गिनते हो या नहीं ?

मौलवी—हां जी जरूर गिनते हैं।

दादाजी—अच्छा, आप के माला के मणकों की जो खास संख्या निश्चित है, उस में अवश्य कोई कारण होगा, इस से मालुम होता है कि किसी न किसी बात की स्थापना जरूर है। कोई कहते हैं कि—खुदा के नाम एक सौ एक हैं, इसलिये माला के मणे के १०१ रखे गये हैं। मतलब यह कि कोई न कोई विशेष कारण से ही संख्या का नियत है, बस इस से स्थापना की सिद्धि होती है और जिसने स्थापना स्वीकार ली उसने मूर्त्ति मान ही लिया, शिर्फ आकार का भेद-भाव है, और जब कि आप, कागज, लकड़ी, या पत्थर के टुकड़ों में खुदा के नाम की स्थापना मानते

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

हैं तो फिर उस नाम वाले की स्थापना क्यों नहीं मानते ?

मौलवी—जब खुदा का कोई आकार ही नहीं तो उसकी मूर्त्ति कैसे बन सकती है ?

दादाजी—आप के कुरान शरीफ में लिखा है कि-मैंने पुरुष को अपने आकार पर पैदा किया, इस से साबित होता है कि खुदा का आकार है, और कुरान का यह तालिम है कि खुदा फरिस्तों की कतार के साथ बड़ी जगह में आयेंगे और इसके सिंहासन को आठ फरिस्तों ने उठाये होंगे। अब अगर खुदा मूर्त्तिवाला नहीं है तो इसकी मूर्त्ति को आठ देवों ने क्यों उठाई ? और मूर्त्तिमान तो आकार वाले को ही कहते हैं, और भी आप लागों का कहना है कि खुदा एगारह अर्श में सिंहासन पर बैठा हुआ है। खैर, अब आप यह बतलाइये कि आपने कभी हज भी किया है ?

मौलवी—मैंने दो वार हज किया है, क्योंकि हज से स्वर्ग मिलता है, फिर काबाशरीफ का हज़ क्यों न करना चाहिये ? जरूर करना चाहिये।

दादाजी—वहाँ पर कौनसी चीज है, जरा बतलाइये तो सही।

मौलवी—हज मक्का शरीफ में होता है, वहां पर एक काला पत्थर है उसको चुम्बन करते हैं और काबा के कोट की प्रदक्षिणा करते हैं।

दादाजी--क्या यह मूर्त्ति-पूजा नहीं है ?

मौलवी—कभी नहीं ?

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

दादाजी—पत्थर का चुम्बन करना और प्रदक्षिणा करना फिर वहां जाकर शिर झुकाना मूर्त्ति-पूजा नहीं तो और क्या है ? और आप जो खुदा के मकान को इस तरह कदर (आदर) करते हैं, तो खुदा की मूर्त्ति का कदर क्यों नहीं करते और उसकी मूर्त्ति को क्यों नहीं मानते ? भला सोचिये तो मौलवी साहिब, कि यह जो ताज़िये निकाले जाते हैं सो बुत नहीं तो और क्या है ? और आप लोग काबा की (पश्चिम की) ओर मुंह करके नमाज पढ़ते हैं, सो भी तो एक तरह की मूर्त्ति-पूजा ही है।

मौलवी—काबा तो खुदा का घर है, इसलिये हम उधर ही मुंह करके नमाज पढते हैं।

दादाजी—क्या और जगह खुदा से खाली है ? जब खाली है तब आपका यह कहना कि खुदा सभी जगह है बेकार होगा।

मौलवी—काबा की तरफ हम मुंह को इसलिये करते हैं कि काबा खुदा का घर है, उस तरफ मुंह करने से दिल खुश होता है और स्थिर रहता है।

दादाजी—काबा तो आंख के बाहर की एक चीज है, जो दूर से दिखाई नहीं देती, खुदा की मूर्त्ति तो सामने होने से अच्छी तरह दिखलाई देने से ध्यान भी अधिक लगेगा और मन स्थिर होगा। आप लोग जो नमाज पढते हैं—सो यदि किसी ऐसी जगह पढा जाय जिस जगह आदमी के आगे से जाने का मुमकीन हो, तो आप लोग उसके बीच में लोटा या कपड़ा कोई चीज

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

रख देते हैं ताकि नमाज में कोई विघ्न न हो जाय। यह जो लोटा या कपड़ा आदि स्थापना की चीज रखी जाती है सो भी खुदा के लिए एक तरह की कैद है यानी सम्भावना की हुई चीज है।

अच्छा मौलवी साहिब—आप एक पूरा प्रमाण और लीजिये मुअल्लिफ किताब दिलबस्तान मुज़ाहिब अपनी किताब में लिखते हैं कि—मुहम्मद साहिब जोहरा (शुक्र) की पूजा करते थे, मालुम होता है कि मुसलमान लोग इसीलिये शुक्रवार को पवित्र जान कर प्रार्थना का दिन समझते हैं, और मुहम्मद साहिब का पिता मूर्त्ति की पूजा किया करता था। मौलवी साहब ज्यादा क्या कहें--आपके कोई मज्झब तो ताजिये को पूजते हैं, और कोई कुरान को और कोई कब्र को पूजते हैं इसलिये आप यदि इनसाफ करके विचारें और देखें तो आप लोग भी मूर्त्ति-पूजा से अलग नहीं हैं। अन्त में मौलवी साहब ने लज्जित होकर दादाजी को प्रणाम किया और कहा कि हां साहिब, बात तो ऐसी ही है, अब मैं मूर्त्ति-पूजा को मानता हूं और मेरी भूलचूक माफ करेंगे, मैं इतने दिनों तक भूल में पड़कर भटकता फिरता था, दर असल में हरएक शख्स को चाहिये कि वह अपने आगे की भलाई के लिये और गुजरते जीवन में सुख-शान्ति के लिये खुदा (भगवान) की (तस्वीर) (मूर्त्ति) की पूजा करे।

इसके बाद दादाजी ने सरदार शेरसिंह सिक्ख की ओर देखकर बोला--क्यों सरदार साहब, आप तो 'मूर्त्ति-पूजा' को मानते हैं न ?

सरदार--नहीं जी, हम जड़ मूर्त्ति की पूजा को किसी तरह भी नहीं मानते।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

दादाजी--अच्छा, आप यह तो बतलावें कि गुरु नानकजी और गुरु गोविंदसिंहजी की मूर्त्ति को देखकर खुश होते हैं या नहीं ?

सरदार—भला, गुरुओं की मूर्त्ति को देखकर कौन खुश नहीं हो सकता, क्योंकि गुरुओंने धर्म की रक्षा के लिये अपने प्राणों की परवाह नहीं की। गुरु नानक साहिबजी और गुरु गोविन्दसिंहजी जिनको भविष्य पुराण में अवतारों में माना है, इनके चित्रों को देखकर कौन रुष्ट हो सकता ? हम लोग इनके चित्रों को देखकर बहुत खुश होते हैं और बहुत रुपये खर्चा करके इनके चित्रों को बनवा कर अपने मकानों में रखते हैं, एवं अपने मकान के दीवारों पर बनवाते हैं।

दादाजी—अच्छा, सरदार साहब, आप लोग अपने गुरुओं की मूर्त्तियों के सामने शिर झुकाते हैं या नहीं? और उनका सम्मान करते हैं या नहीं ?

सरदार—हांजी, हम लोग गुरुओं की मूर्त्तियों के सामने शिर झुकाते हैं और उनका सम्मान भी करते हैं।

दादाजी—क्योंजी सरदार साहिब, मूर्त्ति के सामने शिर झुकाना और उसका सम्मान करना मूर्त्ति-पूजा नहीं है ? बात तो दर असल में सबकी एकसी है, मगर समझ में फेरफार है। कोई किसी रूप में मानता तो कोई किसी तरह मानता, परन्तु मूर्त्ति-पूजा से अलग कोई भी व्यक्ति नहीं है।

अच्छा, सरदारजी, एक बात आपको और भी बतलाते हैं, वह यह कि—आप लोग गुरु ग्रन्थ साहिब को अच्छे अच्छे

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

कपड़ों में लपेट कर चार पाई या चौकी पर रखते हैं और उसकी समाप्ति होने पर भोग पाते हैं और उसके सामने धूप आदि जलाकर घड़ी-घण्टे बजाते हैं और भी कई तरह के राग, शब्द आदि उसके सामने बोलते हैं एवं और भी अनेक तरह से उसकी पूजा करते हैं, तब फिर आप मूर्त्ति-पूजा से अलग कैसे रहे ? अगर यदि मूर्त्ति जड़ है तो ग्रन्थ साहिब भी कोई चेतन नहीं हैं, वे भी तो सिर्फ कागज और स्याही के संयोग से ही बने हुये हैं जिसके नीचे रखने वाली चारपाई को आप लोग "मंजा साहिब" के नाम से कहते हैं, इसलिये अब आप ही खुद शोच समझ कर कहिये कि आप लोग जड़ की पूजा को किस तरह करते हैं या उसका कदर किस प्रकार करते हैं।

सरदार—महात्मन् ! वह गुरुओं की वाणी है, इसलिये हम लोग उसका सम्मान और पूजा करना आवश्यक समझते हैं।

दादाजी—अजी साहब, आप लोग जैसे गुरुओं की वाणी का या गुरु साहब का सम्मान और पूजा करते हैं, उसी तरह मूर्त्ति-पूजक भी परमेश्वर की मूर्त्ति का सम्मान और पूजा करते हैं, और आप लोग जब गुरुओं और गुरुओं की वाणी की प्रशंसा करते हैं तब फिर आप लोगों को परमात्मा की मूर्त्ति का सम्मान और पूजा अवश्यमेव करनी चाहिये, क्योंकि गुरुओं की वाणी से परमात्मा की मूर्त्ति कहीं अधिक पवित्र है, इसलिये आपको चाहिये कि परमात्मा की मूर्त्ति की पूजा और संमान प्रतिदिन यथा समय किया करें, और सबसे अधिक आश्चर्य की

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

बात तो यह है कि पूर्वोक्त वृत्तान्त से जड़ पदार्थों की पूजा को करते हुये भी आप ईश्वर की मूर्त्ति-पूजा पर आक्षेप करते हैं सो बिलकुल बेठीक है, आपको अच्छी तरह विचार करना चाहिये। अन्तमें सरदार शेरसिंह ने 'मूर्त्ति-पूजा' को मान लिया और कहा कि महात्मन् दादाजी 'मूर्त्ति-पूजा' वास्तव में ठीक है इसलिये प्रत्येक आदमी को चाहिये कि ईश्वर की मूर्त्ति की श्रद्धा भक्ति से प्रतिदिन पूजा किया करें, इसी में ही सब का परम कल्याण है, क्योंकि ईश्वर से बढ़ कर पूजने लायक दुनिया में और कुछ नहीं है।

इसके अनन्तर दादाजी ने हजरत ईसामसीह पादरी की तरफ देख कर बोले—क्यों पादरी साहब, आप तो मूर्त्ति-पूजा को मानते हैं?

पादरी—नहीं जी, मैं जड़ मूर्त्ति की पूजा को नहीं मानता।

दादाजी—पादरी साहब यह तो शिर्फ कहने के लिये ही आप लोगों की बात है कि—हम 'मूर्त्ति पूजा' को नहीं मानते, मगर दर असल में आप लोगों का एक "रोमन कैथलिक" मत अच्छी तरह मूर्त्ति-पूजा को मानता है, क्योंकि वे लोग हज़रत मसीह और मरियम के चित्रों को गिर्जाघर में रखकर उस पर फूल, फल आदि चढ़ाते हैं और उनकी पूजा करते हैं और रूस के तो सभी लोग मूर्त्ति-पूजक हैं।

इसके अलावा मुअल्लिफ किताब दिब्सयस्तान-मजाहिब अपनी पुस्तक में लिखते हैं कि हजरत ईसा मसीह सूर्य को पूजा करते थे और रविवार को सूर्य की पूजा करते थे इसलिये

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

ईसाई लोग रविवार के दिन को पूजा और सम्मान का दिन मानते हैं, इसलिये पादरी साहब, आप यदि पक्ष-पात को छोड़ कर विचार करके देखें तो आप लोग भी मूर्त्ति पूजा से अलग नहीं हैं क्योंकि आपके यहाँ यह कहावत बहुत प्रसिद्ध है कि (One picture is brings ten Thousands words) "वन पिक्चर इज ब्रिंगस टेन थाउजेन्टस वर्डस" अर्थात् एक मूर्त्ति दस हजार शब्दों के समान ज्ञान कराती है। अथवा यों कहें कि दुनिया में कोई भी ऐसा मत नहीं जो किसी न किसी तरह मूर्त्ति पूजा को नहीं मानता हो, इसलिये मिष्टर पादरी साहब, सुनिये और ध्यान देकर विचारिये कि—"मूर्त्ति-पूजा" दुनिया में अनादि काल से चली आ रही है, कोई अपने गुरुओं की चित्रों (तस्वीरों) को, कोई अपने वशंजों (खानदानों या बुजुर्गों) की जमीन को तो कोई अपने धर्म पुस्तकों को शिर झुकाते हैं, सम्मान करते हैं, क्या यह 'मूर्त्ति-पूजा' नहीं है?

अन्त में पादरी साहब ने भी मूर्त्ति पूजा स्वीकार ली और महात्मा दादाजी को सप्रेम-प्रणाम किया।

अनन्तर दादा दादूरामजी ने श्री ज्ञानचन्दजी तेरह-पन्थी जैनी से कहा—क्यों ज्ञानचन्दजी आप तो मूर्त्ति-पूजा को मानते हैं।

तेरहपन्थी—ज्ञानचन्दजी—नहीं महाराज, हम प्रतिमा पूजा को किसी तरह भी ठीक नहीं मानते।

दादाजी—कहोजी, मूर्त्ति-पूजा को नहीं मानने का कारण क्या?

पंथी—महाराज, प्रतिमा अजीव है, अजीव की वंदना या पूजा करने से इच्छा पूरी नहीं हो सकती।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

दादाजी—सुनोजी, अक्षर अजीव है, अक्षरों का समुदाय पद होता है और पदों का समुदाय ही वाक्य या महा-वाक्य हैं, धार्मिक पुस्तकें वाक्य के समूह हैं, यानी सभी धार्मिक व्यवहारिक, वैज्ञानिक आदि पुस्तकें अजीव ही हैं और दुनियां के सभी विचारवान् पुरुष उन अजीव पुस्तकों से अपना अभीष्ट को सिद्ध कर लेते हैं, तो फिर 'अजीव प्रतिमा की सेवा से इच्छा पूरी नहीं होती यह आपका कहना बिलकुल असत्य और उपहासास्पद है। और 'निशीथसूत्र' में लिखा है कि—जिन प्रतिमा के सामने पीठ देकर साधू नहीं बैठे, तथा 'व्यवहारसूत्र' में लिखा है कि—'साधु जिन प्रतिमाके संमुख आलोयणा लेवें इसलिये प्रतिमा में अजीव का कहना भी मिथ्या और भी देखिये कि—जैन सिद्धान्त में आठों कर्म अजीव हैं, यदि अजीव जीव को कुछ नहीं करता तो कर्म जीव को संसार में भ्रमण नहीं कराता, किन्तु देख रहे हैं कि अजीव रूपी कर्मों से मारा हुआ जीव संसार के चारों गतियों में सुख दुःख भोगता हुआ भ्रमण कर रहा है।

पंथी—महाराज, भगवान् मुक्ति में है, फिर मन्दिरों में भगवान् को क्यों मानते हैं ?

दादाजी—सुनियेजी, "श्री ज्ञाताजी सूत्र", में द्रौपदी के अधिकार में मन्दिर को जिनघर कहा है, जैसे—

"दोवइ रायवरकन्ना मज्जनघरे निगच्छइ निगच्छाइत्ता जिणघर पव्वसई पव्वसइत्ता.....इत्यादि

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

यहां जिणघर नाम जिन (भगवान्) का घर है, अतः उपर्युक्त सूत्र से सिद्ध हो गया कि जिन मन्दिर में भगवान् है।

पंथी—महाराज, प्रतिमा अबोल है, जीव का भेद, इन्द्रियां, जाति, शरीर, आत्मा, प्राण, गुणठाणा इत्यादि १४ भेद उसमें कुछ नहीं है, १५ बोल प्रतिमा में नहीं है इसलिये प्रतिमा अमान्य है।

दादाजी—सुनियेजी, आपके धार्मिक-सूत्र-सिद्धान्तों की पुस्तकों में भी तो बोल नहीं हैं, तो क्या आपकी वे पुस्तकें अमान्य हैं? अङ्गीकार करना पड़ेगा कि धार्मिक पुस्तकें मान्य हैं, उसी तरह अबोल देव प्रतिमा भी मान्य ही है। और भी सुनिये कि सिद्ध भगवान् भी अबोल ही हैं, उनमें जीव के १४ भेद नहीं हैं, और इन्द्रिय गुणठाणा आदि १५ बोल भी नहीं हैं, तो क्या आप जैसे भी उन्हें वन्दना करता और मान करता है या नहीं? कहना पड़ेगा कि मान करता और नमस्कार करता है, अतः अबोल भी देव प्रतिमा मान्य है और उसकी पूजा वन्दना धार्मिक क्रिया है, श्रेयस्कर है।

पंथी—महाराज, मन्दिरोंमें जाकर पत्थर की मूर्ति को जो देखते हैं वे अपने घर के या पास के मकानों में लगे हुये पत्थर के खम्भे को ही क्यों नहीं दर्शन कर लेते? दूर क्यों जाते? दोनों तो पत्थर ही है।

दादाजी—भाई, कुछ विचार भी तो करो, देखो और सुनो, भगवान् की मूर्त्ति मन्दिरों में प्रतिष्ठित होने के बाद

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

वंदना-पूजा करने योग्य होती है घर के पत्थर के खम्भे पूजने योग्य नहीं है, और जैसे कागज कागज ही है, मगर जिस कागज में सरकारी छाप लगती है वह नोट, स्टाम्प, टीकट आदि के रूप में बहुमूल्य और लोकमान्य हो जाता है इसी तरह प्रतिष्ठापित प्रतिमा भी मान्य है, और भी सुनो कि—'राय प्रश्नेणी सूत्र' में सूर्याभ देव ने तथा 'जीवाभिगम सूत्र' में विजय देवता ने भगवान् की प्रतिमा को धूप दिया है जैसे—"धूवं देवाणं जिनवराणं" इसका अर्थ यह है कि जिनेश्वर देव को धूप दिया है," यदि गणधरों की इच्छा पत्थर को धूप देने के लिए होती तो वे "धूपं देवाणं पत्थराणं" ऐसा ही पाठ लिखते, अतः मन्दिरों में जाकर जिनेश्वर भगवान् का दर्शन करना चाहिये और पत्थर के खम्भे तथा जिनेश्वर की मूर्त्ति एक नहीं है।

पन्थी—महाराज-प्रतिष्ठा कराई हुई प्रतिमा जब गुण को स्वीकार नहीं करती तब फिर प्रतिमा क्या ?

दादाजी—क्योंजी, आप प्रतिदिन प्रातः काल और सायंकाल के प्रतिक्रमण (आवश्यक क्रिया) में ८४ लाख जीवों को क्षमा करते हैं वे ८४ लाख जीव आपकी क्षमा को स्वीकार करते हैं ? या नहीं करते हैं ? उसी तरह प्रतिमा में भी समझिये।

पन्थी—महाराज-प्रतिमा के दर्शन से तो चक्की का दर्शन अच्छा क्यों कि चक्की आटा को पीस कर

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

तो देती है।

दादाजी—वाहरे लाल बुझक्कड़, पेटू को पेटही दीखता; सुनो, जैसे—पेटू को चक्की को देखने से आँटे की याद आती है उसी तरह भावुक भक्तजन को भगवान की प्रतिमा को देखने से भगवान् के निर्मल गुण कर्म स्वभाव का स्मरण होता है, उस स्मरण से दूषित कर्म नष्ट होता है निर्जरा होती है फिर परम शान्ति की प्राप्ति होती है।

पंथी—महाराज, पत्थर का सिंह किसी को खाता नहीं और पत्थर की गौ दूध देती नहीं तो फिर पत्थर की मूर्त्ति किस तरह तारेगी ?

दादाजी—सुनोजी, पत्थर के सिंह को देख कर देखने वालों को वास्तविक सिंह की याद आती है, उसके नर, पशु आदि को भक्षण करना आदि हिंसक स्वभाव का स्मरण होता है और पत्थर की गौ को देखने से वास्तविक गौ के दूध देना आदि गुणों का स्मरण होता है, इसी तरह भगवान् की मूर्त्ति को देख कर उनकी याद आती और उनके वास्तविक गुण स्वरूप का स्मरण होता है जिस से दूषित कर्मों का क्षय होता है।

पंथी—महाराज, प्रतिमा पाषाण की होती है, पाषाण एकेन्द्रिय है, अतः उसे पूजने से क्या लाभ ?

दादाजी—नहीं जी, प्रतिमा एकेन्द्रिय नहीं है, वह तो अनेन्द्रिय है, क्योंकि जिनेश्वर भगवान् अनेन्द्रिय है और

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

उन्हीं की प्रतिमा है, और पाषाण का सम्बन्ध जब तक खान से रहता है तभी तक पाषाण एकेन्द्रिय कहलाता, खान से निकलने के बाद अनेन्द्रिय हो जाता, जैसे खान से खोदी हुई तुरत की मिट्टी सचित्त होती है और बाद में सूखने से अचित्त हो जाती है।

पंथी—महाराज, प्रतिमा को पूजने से छः काय के जीवों की हिंसा होती है और हिंसा में धर्म कहां ?

दादाजी—सुनिये साहब, "राय प्रश्नेणी सूत्र" में तथा 'महाकल्प सूत्र' में जिन प्रतिमा को जल, चन्दन पुष्पादि से पूजने के लिये स्वयं भगवान् महावीर ने आज्ञा फरमाई है, आज्ञा रूप धर्म को करने से हिंसा नहीं लगती, और 'प्रश्न व्याकरण सूत्र' में दया के ६० नामों में यज्ञ और पूजा का भी नाम आया है, अतः प्रतिमा पूजा में धर्म ही है।

पंथी—महात्मन् ! प्रतिमा में पंच महाव्रत नहीं है, यदि है तो उसे स्त्री किस तरह पूजा कर सकती और स्पर्श कर सकती है ? यदि स्पर्श कर सकती है तो फिर प्रतिमा में पंच महाव्रत कहां रहा ?

दादाजी—सुनोजी 'राय पसेणी' सूत्र में सूर्याभदेव के अधिकार में "जिण पडिमा जिणुस्सेह" ऐसा पाठ है, भावार्थ यह हुआ कि—जिन प्रतिमा जिनेश्वर भगवान् की तरह है, अतः जिन प्रतिमा में पंच महाव्रत है। और जिन प्रतिमा तो स्थापनारूप जिनेश्वर

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

है, स्थापना रूप जिनेश्वर को स्त्री स्पर्श कर सकती है इस में कुछ भी दोष नहीं, 'ज्ञाताजी सूत्र' में लिखा है कि सती द्रौपदी ने जिन मन्दिर में जाकर जिन प्रतिमा पूजी है और जिनेश्वर से मोक्ष मांगी है।

पन्थी—महात्मन्! प्रतिमा हिलती नहीं, चलती नहीं, उठती नहीं, बैठती नहीं और भागती नहीं तो कपाट क्यों बन्द करते और ताले क्यों लगाते? यदि प्रतिमा भगवान् है तो भगवान् को कैद क्यों करते हैं?

दादाजी—सुनिये महाशयजी, प्रतिमा को कैद नहीं करते, बल्कि चोर और निन्दकों से बचाने के लिये उसे कपाट और ताला लगाते हैं और जैसे आपके "भगवान् की वाणी" हिलती नहीं, चलती नहीं, उठती नहीं, बैठती नहीं और भागती नहीं है मगर फिर भी आप उसे कसकर कपड़े और मोटे डोरों से बान्धते हैं उसी तरह प्रतिमा में भी समझें।

पन्थी—महाराज, प्रतिमा के आगे नगारे आदि बजाना और नृत्य करना क्या अच्छा है?

दादाजी—हांजी, बेशक अच्छा है, तीर्थंकारों के आगे समवसरण में देवों ने अपनी भक्ति के दिखाने के लिये दुंदुभी बजाई, उसकी आवाज सुनकर माता मरुदेवी ने अनित्य भावना को भावकर केवलत्व को पाया है, भक्ति में पधारी हैं और गृहस्थ के चिन्ह को ही धारण करती हुई मुक्ति को गई है।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

पन्थी—महात्मन्! प्रतिमा पूजने में यदि धर्म होता तो भगवान् ने साधुपना लेकर कठिन क्रिया क्यों की? प्रतिमा को ही पूज लेते।

दादाजी—महाशय, भगवान् ने दीक्षा लेते समय भी प्रतिमा पूजी है, 'ज्ञाताजी सूत्र' को देखिये और कठिन क्रिया करना तो तीर्थंकरों का कर्त्तव्य है।

पन्थी—महाराज, सिद्ध भगवान् निराकार है और प्रतिमा साकार है, फिर यह बेमेल जोड़ा कैसा?

दादाजी—सुनियेजी, और खूब ध्यान देकर सुनिये, प्रतिमा सिद्ध भगवान् की नहीं है, भगवान् तो दूसरे पद में है, अरिहन्त देव की प्रतिमा प्रथम पद में है, अरिहंत देव आकार तथा प्रति हार्य सहित हैं।

पंथी—कुछ विनीत होकर, महाराज हमारे माने हुये ३२ जैनागम सूत्रों में मूर्त्ति-पूजा का साफ साफ पाठ है?

दादाजी—हांजी, बहुत है, सुनिये—स्थानांग सूत्र के ४ स्थानाध्यन, २ उद्देस, ३०७ सूत्र में और 'समवायांग' में ३५ सूत्र में और 'भगवती सूत्र' में ३ शतक, २ उद्देश, १४४ सूत्र में और "उपासकदशांग सूत्र" में ७ अध्ययन, २ सूत्र में और "महाकल्प सूत्र" में तथा "महानिशीथ सूत्र" ३ अध्याय में और "उववाई सूत्र" में १—४० सूत्र में, तथा 'रायपसेणी सूत्र' के १३९ सूत्र में और "उत्तराध्ययन निशीथ सूत्र" में अध्याय १० गाथा १७१ इत्यादि में जिन प्रतिमा की पूजा के विषय में अनेको सुदृढ़ प्रमाण उपस्थित हैं,

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

उन पुस्तकों में आप अच्छी तरह देखलें और मनन करें।

पन्थी—महाराज, अभी किसी सूत्र का पाठ देकर समझाइये, पीछे तो हम देखेंगे ही।

दादाजी—सुनियेजी, 'महाकल्प सूत्र' में लिखा है कि—

"से भयवं तहारूवं समणं वा माहणं वा चेइयघरे गच्छेज्जा ? हे गोयमा दिणे दिणे गच्छे ज्जा"।

भावार्थ—हे भगवन् महावीर ! तथारूप श्रवण वा माहण चैत्य घर (जिन मन्दिर) को जावें ? हे गोतम ! प्रतिदिन जिन मन्दिर को जावे, नहीं जावे तो छ बेला का दण्ड भागी होवे।

पंथी—महाराज, चैत्य का अर्थ तो साधू, या मति या श्रुति या ज्ञान होता है, चैत्य का अर्थ जिन मन्दिर कहां है ?

दादाजी—सुनोजी, 'चिती—संज्ञाने' धातु से 'चैत्य' शब्द सिद्ध होता है, 'नाममाला' में लिखा है कि "चैत्यं विहारे जिनसद्मनि" अर्थात् चैत्य का नाम विहार या जिनालय है, इसी तरह 'अमरकोष' में लिखा है कि "चैत्यं आयतनं प्रोक्त" अर्थात् चैत्य शब्द का अर्थ सिद्धायतन अथवा जिनमन्दिर है, तथा हेमचन्द्राचार्य ने "अनेकार्थ संग्रह" में लिखा है कि-"चैत्यं जिनौक तद्बिम्बं चैत्यमुद्देशपादपः" अर्थात् चैत्य का अर्थ जिनमन्दिर है, जिनबिम्ब है और वह वृक्ष जिसके नीचे तीर्थंकर भगवान् को केवलज्ञान प्राप्त हुआ था-इस तरह चैत्य का अर्थ जिनमन्दिर ही है इसके

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

अनेकों प्रमाण हैं और भी सुनो—भगवती सूत्र के १० शतक ४ उद्देश में लिखा है कि—

"नन्नत्थ अरिहन्ते वा अरिहन्त चेइयाणि वा भावी अप्पणो अणगारस्स वा णिस्साए उड्ढं उप्पयंति जाव सोहम्मो कप्प इति।

भावार्थः—जब चमरेन्द्र सौधर्म देवलोक में गया तब एक अरिहन्त का दूसरा चैत्य जिन प्रतिमा का तीसरा साधु का शरण लेकर गया। अब आप विचारिये कि यदि चैत्य का अर्थ साधु या मुनि होता तो यहां अलग नाम अणगार क्यों कहते? अतः चैत्य का अर्थ जिनमन्दिर ही है।

और भी सुनो, महाकल्प सूत्र में लिखा है कि—

" से भयवं समणोवासगस्स पोसहशालाए पोसहिए पोसहवं मयारी किं जिणहरं गच्छेज्जा, हंता गोयमा गच्छेज्जासि, भगवं केणट्ठेणं गच्छेज्जा, जे कोइ पोसइसालाए पोसहवं भयारी जओ जिणहरे न गच्छेज्जा तओ पायच्छित्तं हवेज्जा, गोयमा जहां साहु तहां भणिप्पवं झट्ठं अह वा दुवालस्सं पायच्छित्तं हवेज्जा।

भावार्थ-भगवान् महावीर से गौतम ने पूछा कि हे भगवन्! श्रावक पोषधशाला में पोषध में रहा हुआ पोषध—व्रत ब्रह्मचारी जिनमन्दिर को जावे क्या? भगवन् ने कहा, हां, जावे, गोतम ने पूछा, भगवन्! किस वास्ते जावे, भगवन् ने कहा, गोतम! ज्ञान, दर्शन और चारित्र के लिये जावे। गोतम ने पूछा, हे भगवन्! पोषधशाला में रहा हुआ पोषधव्रत ब्रह्मचारी जो कोई श्रावक जिनमन्दिर में नहीं जावे तो क्या उसे प्रायश्चित

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

होवे ? भगवान् ने कहा हे गोतम जैसे साधुओं को प्रायश्चित्त आवे उसी तरह श्रावक को भी प्रायश्चित्त होवे। इससे भी यह साफ साफ साबित होता है कि साधु या श्रावण प्रत्येक को यथायोग्य जिन प्रतिमा की पूजा, दर्शन और वन्दना करनी चाहिये।

एवं महानिशीथ सूत्र में लिखा है कि—

"काउंपि जिणाय पणेहिं मंडियं सव्वमेयणीवट्टं दाणाई चतुष्केणं सठ्ढो गच्छेज्जा अचुतं जव"।

भावार्थः—यदि कोई श्रावक जिनमन्दिर करावे तो वह अच्युत नाम १२ में देवलोक में जावे, अपि शब्द से दान, शील, तप और भावना से भी १२ वें अच्युत देवलोक में जावे"।

इससे भी जिनमन्दिर करना और जिनप्रतिमा की पूजा सिद्ध होती है।

इसी तरह भगवती सूत्र के २० शतक ६ उद्देश में जंघाचारण मुनि ने प्रतिमायें पूजी हैं, यह खास भगवान् महावीर ने गोतम से कहा है।

और 'रायपसेणी सूत्र' में सूर्याभदेव के जिन प्रतिमा को पूजने का पाठ है जैसे—

"..... देवाणुप्पियाणं सुरियाभे विमाणे सिद्धायणं अव्वसयं जिणपडिमाणं जिणुस्सेह पमाणतेमाणं सणिखित्तं चिट्ठति, सभाएणं सुहम्माएणं माणवत्तो चेइए खंभे वइरामए गोलवट्टसमुगाए बहउज्जिगराई कहाउसणि गखिता उचिट्ठंति ताउणं देवाणुप्पियाणं अणरो हि च बहुणं वेमाणियाणं देवोणय देवीणए अचाणिज्झा ए जाव वंदाणिज्झा आणमसणिज्झाओ

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

पुव्वणीज्झाओ मामाणिज्झाओ कल्लाणं मंगलं देवयं चेइयं पज्जुवासणिज्झाओ तएणं देवाणुप्पियाणं पुव्वं करणिज्झं तं एसा देवाणुप्पियाणं पुव्विसेयं तएणंसे देवाणुप्पियाणं पुव्वि पच्छाविहियाए सुहाए खमाए णिस्सेसाए अणुगामि पत्ताए भवस्सन्ति।

भावार्थः—यहां "जिण पडिमाणं जिणुस्सेह" अर्थात् जिन-प्रतिमा जिनेश्वर के समान है, सामानिक देवों ने सूर्याभदेव को जिन प्रतिमा को पूजने के लिए कहा और कहा कि जिन प्रतिमा की पूजा कल्याण, मंगल करने वाली है। पूर्व के देव, मुनि सत्पुरुषों ने किया और पीछे के भी ज्ञानी, ध्यानी मुनि सन्त साधु लोग जिन प्रतिमा की पूजा को करेंगे। यही बात भगवान् महावीर ने भी आभियोगिकों से कही है, जब भगवान् महावीर को आभियोगिकों ने वन्दना की तब उन्हें भगवान् ने कहा. जैसे—'रायपसेणी' सूत्र में कहा है—

.....सूरियाभस्सदेवस्स आभियोगिया देवा देवाणुप्पिया वंदामो नमंसामो सक्कारेमो सम्माणेमो कल्लाणं मंगलं देवयं चेइयं पज्जुवासामो देवाइं समणे भगवं महावीरे ते देवे एवं वयासी पोराणमेयं देवा जीयमेयं देवा किच्चमेयं देवा करणिज्जमेयं देवा आइण्णमेयं देवा अब्भणुण्णायमेयं।

भावार्थः—जिस समय आभियोगिकों ने भगवान् महावीर को 'देवयं चेइयं' कहकर वन्दना की, तब भगवान् ने उनसे कहा कि हे देवों! यह तुम्हारी पूजा प्राचीन है, यह आचार है, यह कृत्य है, यह करणीय है, यह पूर्व दोनों ने आचरण किया है,

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

इस तरह सभी तीर्थंकरों ने आज्ञा दी है और मेरीभी आज्ञा है। अब कहिये ज्ञानचन्दजी, आभियोगिकों ने "देव चेइयं" याने जिन प्रतिमा की उपमा देकर भगवान् की वन्दना की और भगवान् महावीर ने उसे अच्छा कहा, अंगीकार किया और आज्ञा दी कि ऐसी पूजा करो, तब क्या प्रतिमा पूजा सिद्ध हुई या नहीं।

श्रीयुत ज्ञानचन्दजी ने विनीत होकर कहा—महात्मन्! हम अभीतक प्रतिमा पूजा के वास्तविक तात्पर्य से दूर थे, आपकी कृपा से मेरी व्यर्थ की शंका निवृत्त हुई, हम अवश्यमेव मूर्त्ति-पूजक बनेंगे और सबको बनना चाहिये इसीमें सबका सर्वथा श्रेय है सौभाग्य है और है शान्ति इस तरह वहां उपस्थित सभी ने निष्पक्ष होकर मूर्त्ति-पूजा को सादर अंगीकार किया और वहां के सब सहर्ष अपने अपने घर को चले गये कालूरामजी भी तब से पक्के मूर्त्ति-पूजक बन गये और ईश्वर की सप्रेम-भक्ति में सुख पूर्वक दिन बिताने लगे।

ॐ शान्तिः

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com